## न्यायाधीश–वाणिज्यिक न्यायालय कम संख्या – 4, जयपुर महानगर–द्वितीय

**पीठासीन अधिकारी :– अमित कुमार कड़वासरा** *आर0जे0एस0*
*(जिला न्यायाधीश संवर्ग)*

### (1) आर्बिट्रेशन प्रार्थना–पत्र प्रकरण सं.– 195/2018 CIS No.- 374/2019 CNR No. RJJT1A-000841-2019

अल्ट्राटेक सीमेन्ट लिमिटेड, पंजीकृत कार्यालय ''बी'' विंग, अहूरा सेन्टर, सैकण्ड फ्लोर, महाकाली केव्ज रोड, अन्धेरी ईस्ट मुम्बई, महाराष्ट्र एवं संबंधित शाखा कार्यालय विक्रम नगर, पोस्ट ऑफिस खोर, जिला नीमच, मध्यप्रदेश–458470 जरिये प्राधिकृत अधिकारी श्री मनोज मून्दडा ––– प्रार्थी/याची कम्पनी

**– ब ना म –**

राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड, पंजीकृत कार्यालय विद्युत भवन, विधान सभा के पास, जयपुर राजस्थान जरिये अध्यक्ष व प्रबंधक निदेशक।

––अप्रार्थी/विपक्षी

### (2) आर्बिट्रेशन प्रार्थना–पत्र प्रकरण सं.– 188/2018 CIS No.- 366/2019 CNR No. RJJT1A-000831-2019

श्री सीमेन्ट कम्पनी लिमिटेड, पंजीकृत कार्यालय बांगड नगर, ब्यावर–305901, जिला अजमेर राजस्थान जरिये ज्वाईंट वाई प्रसीडेंट (लीगल) एण्ड पी.ओ.ए. श्री एस. एल. भंसाली ––– प्रार्थी/याची कम्पनी

**– ब ना म –**

राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड, पंजीकृत कार्यालय विद्युत भवन, विधान सभा के पास, जयपुर राजस्थान जरिये अध्यक्ष व प्रबंधक निदेशक।

––अप्रार्थी/विपक्षी

## (3) आर्बिट्रेशन प्रार्थना–पत्र प्रकरण सं.– 14/2018 CIS No.- 223/2019 CNR No. RJJT1A-000364-2019

बिरला कॉर्पोरेशन लिमिटेड, पंजीकृत एवं प्रधान कार्यालय बिडला बिल्डिंग 9/1, आर.एन. मुखर्जी रोड, कोलकाता–700001 एवं संबंधित कार्यालय माधव नगर, चन्देरिया, चित्तोडगढ– 312021 (राजस्थान) जरिये प्राधिकृत अधिकारी श्री उमेश पारीक ––– प्रार्थी/याची कम्पनी

**– ब ना म –**

राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड, पंजीकृत कार्यालय विद्युत भवन, विधान सभा के पास, जयपुर राजस्थान जरिये चैयरमेन व प्रबंधक निदेशक।

––अप्रार्थी/विपक्षी

## (4) आर्बिट्रेशन प्रार्थना–पत्र प्रकरण सं.– 190/2018 CIS No.- 368/2019 CNR No. RJJT1A-000834-2019

मंगलम सीमेन्ट लिमिटेड, पंजीकृत कार्यालय आदित्य नगर, मोडक–326520, जिला कोटा (राज.) जरिये अधिकृत अधिकारी व वाईस प्रसीडेंट (परचेज) श्री एस.आर. सिन्हा –––प्रार्थी/याची कम्पनी

**– ब ना म –**

राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड, पंजीकृत कार्यालय विद्युत भवन, विधान सभा के पास, जयपुर राजस्थान जरिये चैयरमेन व प्रबंधक निदेशक।

––अप्रार्थी/विपक्षी

## (5) आर्बिट्रेशन प्रार्थना–पत्र प्रकरण सं.– 193 / 2018 CIS No.- 372/2019 CNR No. RJJT1A-000839-2019

ए.सी.सी. लिमिटेड, लाखेरी सीमेन्ट वर्क्स, लाखेरी, जिला बून्दी, जरिये प्लांट हैड के. रजत कुमार ———प्रार्थी / याची कम्पनी

**– <u>ब ना म</u> –**

राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड, विद्युत भवन, ज्योति मार्ग, जयपुर जरिये चैयरमेन कम मैनेजिंग डॉयरेक्टर। ——अप्रार्थी / विपक्षी

## (6) आर्बिट्रेशन प्रार्थना–पत्र प्रकरण सं.– 194 / 2018 CIS No.- 373/2019 CNR No. RJJT1A-000840-2019

राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड, विद्युत भवन, जयपुर (राज.) जरिये चैयरमेन व प्रबंधक निदेशक जयपुर (राज.)।

———प्रार्थी / नॉनक्लेमेन्ट

**– <u>ब ना म</u> –**

अल्ट्राटेक सीमेन्ट लिमिटेड, पंजीकृत कार्यालय ''बी'' विंग, अहूरा सेन्टर, सैकण्ड फ्लोर, महाकाली केव्ज रोड, अन्धेरी ईस्ट मुम्बई, महाराष्ट्र एवं संबंधित शाखा कार्यालय विक्रम नगर, पोस्ट ऑफिस खोर, जिला नीमच, मध्यप्रदेश–458470 जरिये प्राधिकृत अधिकारी श्री मनोज मून्दडा

——अप्रार्थी / क्लेमेन्ट

## (7) आर्बिट्रेशन प्रार्थना–पत्र प्रकरण सं.– 189/2018 CIS No.- 367/2019 CNR No. RJJT1A-000832-2019

राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड, विद्युत भवन, जयपुर (राज.) जरिये चैयरमेन व प्रबंधक निदेशक जयपुर (राज.)।

———प्रार्थी/नॉनक्लेमेन्ट

**– <u>ब ना म</u> –**

श्री सीमेन्ट कम्पनी लिमिटेड, पंजीकृत कार्यालय बांगड नगर, ब्यावर–305901, जिला अजमेर राजस्थान जरिये ज्वाईंट वाई प्रसीडेंट (लीगल) एण्ड पी.ओ.ए. श्री एस. एल. भंसाली

——अप्रार्थी/क्लेमेन्ट

## (8) आर्बिट्रेशन प्रार्थना–पत्र प्रकरण सं.– 13/2018 CIS No.- 222/2019 CNR No. RJJT1A-000363-2019

राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड, विद्युत भवन, जयपुर (राज.) जरिये चैयरमेन व प्रबंधक निदेशक जयपुर (राज.)।

———प्रार्थी/नॉनक्लेमेन्ट

**– <u>ब ना म</u> –**

बिरला कॉर्पोरेशन लिमिटेड, पंजीकृत एवं प्रधान कार्यालय बिडला बिल्डिंग 9/1, आर.एन. मुखर्जी रोड, कोलकाता–700001 एवं संबंधित कार्यालय माधव नगर, चन्देरिया, चित्तोडगढ– 312021 (राजस्थान) जरिये प्राधिकृत अधिकारी श्री उमेश पारीक

——अप्रार्थी/क्लेमेन्ट

**(9) आर्बिट्रेशन प्रार्थना–पत्र प्रकरण सं.– 191 / 2018 CIS No.- 369/2019**
**CNR No. RJJT1A-000835-2019**

राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड, विद्युत भवन, जयपुर (राज.) जरिये चैयरमेन व प्रबंधक निदेशक जयपुर (राज.)।

———प्रार्थी / नॉनक्लेमेन्ट

**– ब ना म –**

मंगलम सीमेन्ट लिमिटेड, पंजीकृत कार्यालय आदित्य नगर, मोडक–326520, जिला कोटा (राज.) जरिये अधिकृत अधिकारी व वाईस प्रसीडेंट (सेल्स) श्री जी.एस. चांडक

——अप्रार्थी / क्लेमेन्ट

**(10) आर्बिट्रेशन प्रार्थना–पत्र प्रकरण सं.– 192 / 2018 CIS No.- 371/2019**
**CNR No. RJJT1A-000837-2019**

राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड, विद्युत भवन, जयपुर (राज.) जरिये चैयरमेन व प्रबंधक निदेशक जयपुर (राज.)।

———प्रार्थी / नॉनक्लेमेन्ट

**– ब ना म –**

ए.सी.सी. लिमिटेड, लाखेरी सीमेन्ट वर्क्स, लाखेरी, जिला बून्दी, जरिये अधिकृत प्रतिनिधि श्री के. रजत कुमार

——अप्रार्थी / क्लेमेन्ट

(1) आर्बिट्रेशन प्रार्थना पत्र प्रकरण सं.– **195/2018** CIS No.- 374/2019 CNR No. RJJT1A-000841-2019
अल्ट्राटेक सीमेन्ट लिमिटेड बनाम राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड

(2) आर्बिट्रेशन प्रार्थना पत्र प्रकरण सं.– **188/2018** CIS No.- 366/2019 CNR No. RJJT1A-000831-2019
श्री सीमेन्ट लिमिटेड बनाम राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड

(3) आर्बिट्रेशन प्रार्थना पत्र प्रकरण सं.– **14/2018** CIS No.- 223/2019 CNR No. RJJT1A-000364-2019
बिरला कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड

(4) आर्बिट्रेशन प्रार्थना पत्र प्रकरण सं.– **190/2018** CIS No.- 368/2019 CNR No. RJJT1A-000834-2019
मंगलम सीमेन्ट लिमिटेड बनाम राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड

(5) आर्बिट्रेशन प्रार्थना पत्र प्रकरण सं.– **193/2018** CIS No.- 372/2019 CNR No. RJJT1A-000839-2019
एसीसी लिमिटेड बनाम राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड

(6) आर्बिट्रेशन प्रार्थना पत्र प्रकरण सं.– **194/2018** CIS No.- 373/2019 CNR No. RJJT1A-000840-2019
राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड बनाम अल्ट्राटेक सीमेन्ट लिमिटेड

(7) आर्बिट्रेशन प्रार्थना पत्र प्रकरण सं.– **189/2018** CIS No.- 367/2019 CNR No. RJJT1A-000832-2019
राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड बनाम श्री सीमेन्ट लिमिटेड

(8) आर्बिट्रेशन प्रार्थना पत्र प्रकरण सं.– **13/2018** CIS No.- 222/2019 CNR No. RJJT1A-000363-2019
राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड बनाम बिरला कॉर्पोरेशन लिमिटेड

(9) आर्बिट्रेशन प्रार्थना पत्र प्रकरण सं.– **191/2018** CIS No.- 369/2019 CNR No. RJJT1A-000835-2019
राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड बनाम मंगलम सीमेन्ट लिमिटेड

(10) आर्बिट्रेशन प्रार्थना पत्र प्रकरण सं.– **192/2018** CIS No.- 371/2019 CNR No. RJJT1A-000837-2019
राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड बनाम एसीसी लिमिटेड

**आदेश दिनांक – 13.09.2022**



**समेकित आपत्ति प्रार्थना पत्र अंतर्गत धारा 34, माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम, 1996 बाबत् अपास्त किये जाने विद्वान एकल पंच के माध्यस्थम पंचाट दिनांकित 18–02–2015 एवं माध्यस्थम आदेश दिनांकित 17–05–2015**

**<u>उपस्थित</u> :–**

1. वरिष्ठ अधिवक्ता श्री सुधांशु कासलीवाल, विदुषी अधिवक्ता सुश्री सुरूचि कासलीवाल, सुश्री अलिशा चौपड़ा व श्री प्रयांश जैन विद्वान अधिवक्तागण कम्पनियॉ (1) अल्ट्राटेक सीमेन्ट लिमिटेड (2) मंगलम सीमेन्ट लिमिटेड (3) बिरला कॉर्पोरेशन लिमिटेड (4) श्री सीमेन्ट लिमिटेड की ओर से।
2. वरिष्ठ अधिवक्ता श्री आर.के. अग्रवाल, श्री अधिराज मोदी एवं श्री शुभम कुमार शर्मा विद्वान अधिवक्तागण, आर.आर.वी.यू.एन.एल की ओर से।
3. श्री अनुराग अग्रवाल व श्री सतीश पारीक विद्वान अधिवक्तागण, कम्पनी ए.सी. सी. लिमिटेड की ओर से।

**न्यायालय द्वारा –** **–<u>आदेश</u>–** **दिनांक – 13.09.2022**

1– हस्तगत प्रकरण में पांचों सीमेंट कम्पनियों (1)अल्ट्राटेक सीमेन्ट लिमिटेड, (2) मंगलम सीमेन्ट लिमिटेड, (3) बिरला कॉर्पोरेशन लिमिटेड, (4) एसीसी लिमिटेड, व (5) श्री सीमेन्ट लिमिटेड एवं राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड ने विद्वान एकल पंच के आलौच्य पंचाट दिनांक 18.02.2015 व तत्पश्चात् पारित आदेश दिनांक 17.05.2015 को आवेदन धारा 34 माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम के द्वारा आक्षेपित किया है। इन सभी हस्तगत पत्रावलियों में विद्वान एकल पंच के एक ही समय अवार्ड को चुनौती दी गई है अतः न्यायहित व अधिनिर्णयन की सुविधा हेतु सभी आपत्ति प्रार्थना पत्रों का इसी एकल निर्णय द्वारा निस्तारण किया जा रहा है।

2– इस निर्णय में सहूलियत व बाफहमी हेतु राजस्थान राज्य विद्युत वितरण निगम लिमिटेड को निर्णय में आगे **निगम** के नाम से संबोधित किया जायेगा और पांचों सीमेन्ट कम्पनियों को यकजाई रूप से **सीमेन्ट कम्पनी / कम्पनियों** के नाम से संबोधित किया जायेगा। इस निर्णय की एक–प्रति सभी संबंधित पत्रावलियों में संलग्न रहे।

3– प्रकरण के संक्षेप में तथ्य इस प्रकार से है कि राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड एक लोक उपक्रम है जो राजस्थान राज्य में विद्युत उत्पादन तथा आनुषांगिक कार्यों में रत है। पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, भारत सरकार ने अधिसूचना संख्या एस.ओ. 763 (ई) दिनांकित 14.09.1999 के प्रकाशन के द्वारा अधिसूचना जारी की गई जिसमें विद्युत उत्पादन थर्मल पावर संयंत्रों से उत्पन्न होने वाली फ्लाई ऐश के कारण पर्यावरण को होने वाले नुकसान का हवाला देकर, फ्लाई ऐश के प्रभावी व्ययन बाबत् व्यवस्था करने हेतु निर्देश दिया गया था। इस अधिसूचना के मुताबिक कम से कम 10 वर्ष की अवधि तक फ्लाई ऐश सीमेन्ट कम्पनियों को निःशुल्क दी जा सकती थी। इस अधिसूचना के अनुसरण में निगम के द्वारा पांचों सीमेन्ट कम्पनी 1. अल्ट्राटेक सीमेन्ट लिमिटेड 2. मंगलम सीमेन्ट लिमिटेड 3. बिरला कॉर्पोरेशन लिमिटेड 4. एसीसी लिमिटेड 5. श्री सीमेन्ट लिमिटेड वर्ष 2004 में फ्लाई ऐश के प्रभावी व्ययन हेतु उनके साथ लिखित करार किये गये थे।

4– निगम द्वारा पूर्व व्यवस्था के सिस्टम में समस्त उत्सर्जित फ्लाई ऐश को एक बडे गढ्ढे / पोण्ड में डाला जाता था जिससे पर्यावरण को काफी नुकसान हो रहा था जिस कारण दीवानी रिट याचिका संख्या 2145 / 99 उनवानी सेन्टर फॉर पब्लिक

इन्ट्रेस्ट लिटिगेशन देहली बनाम यूनियन ऑफ इण्डिया, माननीय दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष वर्ष 1999 में पेश की गई। जिसमें माननीय न्यायालय ने आदेश दिनांकित 25.081999 से पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, भारत सरकार को इस संबंध में माननीय देहली उच्च न्यायालय द्वारा दी गई समयावधि में उचित उपचारिक तरीका अपनाने हेतु आदेशित किया गया था एवं तदनुसार पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, भारत सरकार ने अधिसूचना संख्या एस.ओ. 763 (ई) दिनांकित 14.09.1999 के प्रकाशन से आगामी दस वर्षों के लिए उक्त फ्लाई ऐश को थर्मल पावर प्लांट द्वारा बिना किसी प्रतिफल के निःशुल्क ऐश–आधारित उत्पाद जैसे सीमेन्ट, कंकरीट ब्लॉक्स, ईंटे, पेनल एवं अन्य सामान अथवा सडक, बांध, बंधे तटबंध के निर्माण और अन्य निर्माण गतिविधियों के लिए उपलब्ध करवाना था। उक्त अधिसूचना के संदर्भ में सीमेन्ट कम्पनियों के अनुसार उक्त फ्लाई ऐश को बिना किसी राशि के निःशुल्क कम से कम 10 वर्षों के लिए अर्थात वर्ष 2009 तक सीमेन्ट कम्पनियों को आपूर्ति करना था। वर्ष 1999 में निगम का केएसटीपीएस पर अपना स्वयं का ड्राई फ्लाई ऐश हैण्डलिंग एवं मेन्टीनेन्स सिस्टम स्थापित नहीं था। अधिसूचना दिनांकित 14.09.1999 की अनुपालना में निगम एवं सीमेन्ट कम्पनियों के मध्य अनुबंध निष्पादित हुए जिनके तहत केएसटीपीएस की कुल 6 इकाईयों में पांचों सीमेन्ट कम्पनियों को ड्राई फ्लाई ऐश के डिस्पोजल एवं रख रखाव सिस्टम को स्थापित करने के उद्देश्य से भूमि प्रदान की गई।

5– सभी सीमेन्ट कम्पनियॉ अपने ब्रांड के नाम से सीमेन्ट विक्रय कर रही है। फ्लाई ऐश सीमेन्ट कम्पनियों के लिए सीमेन्ट में मिलाने वाला एक प्रभावी घटक बन चुका है। निगम की अन्य इकाईयों के अतिरिक्त एक इकाई कोटा में स्थित है और

कोटा सुपर थर्मल पावर स्टेशन (केएसटीपीएस) के नाम से जानी जाती है तथा केएसटीपीएस अपने बायलर्स में विभिन्न प्रकार के कोयले का ईंधन के रूप में उपयोग करती है। उक्त कोयला बायलर में पूर्णतया जल जाता है जिससे भाप बनती है और उक्त भाप का उपयोग विद्युत उत्पादन में किया जाता है। फ्लाई ऐश बायलर में कोयले के जलने की प्रक्रिया के दौरान उत्सर्जित होने वाला एक अपशिष्ट है। फ्लाई ऐश बड़े पैमाने पर सीमेन्ट निर्माता कम्पनीयों द्वारा सीमेन्ट के उत्पादन हेतु एक अवयव के रूप में उपयोग किया जाता है। थर्मल पावर प्लान्ट से उत्सर्जित होने वाली फ्लाई ऐश की गुणवत्ता एवं मात्रा उपयोग में लिए गये कोयले की गुणवत्ता पर निर्भर करती है और इस कारण से यह समय मय पर बदलती रहती है। केएसटीपीएस की कुल 7 इकाईयॉ लगभग 20 लाख मेट्रिक टन ''अपशिष्ट'' सालाना उत्सर्जित करती है जिनमें से लगभग 12 लाख मेट्रिक टन सालाना फ्लाई ऐश उत्सर्जित होता है और शेष बॉटम ऐश होता है। निगम एक विद्युत निर्माता है एवं सीमेन्ट कम्पनियों के साथ हुए करार के अनुसरण में सभी सीमेन्ट कम्पनियों ने अपने–अपने फ्लाई ऐश हैण्डलिंग सिस्टम की स्थापना निगम की कोटा थर्मल पावर संयंत्र में की गई है। सीमेन्ट कम्पनियों द्वारा निगम के साथ हुए लिखित करार के अनुसरण में कोटा विद्युत इकाई में युनिट नं. 1 लगायत 6 में फ्लाई ऐश का सिस्टम स्थापित किया गया।

6– निगम व सीमेन्ट कम्पनियों की आपत्ति याचिकाओं व अभिलेख की सामग्री से प्रकट होता है कि पांचों सीमेन्ट कम्पनियों को कोटा थर्मल पावर संयंत्र में निम्नलिखित युनिटों में फ्लाई ऐश के प्रभावी व्ययन हेतु फ्लाई ऐश हैण्डलिंग सिस्टम लगाने की अनुमति निगम द्वारा निष्पादित करार के अनुसरण में प्रदान की

गई जिनके कमिशन की तिथि व कमिशनिंग से प्रारम्भिक पांच वर्ष समापन तिथि को दर्शाती हुई तालिका निम्नांकित हैः–

| क्र. सं. | कम्पनी का नाम | कम्पनी के साथ निगम के हुए अनुबंध की तिथि | यूनिट | सिस्टम कमीशन तिथि | प्रारम्भिक पांच वर्ष समापन की तिथि |
|---|---|---|---|---|---|
| 1 | अल्ट्राटेक सीमेन्ट लि. | 15.10.2004 | 4–5 | 30.06.2007 | 29.06.2012 |
| 2 | श्री सीमेन्ट लि. | 02.11.2004 | 6ए | 16.10.2007 | 15.10.2012 |
| 3 | मंगलम सीमेन्ट लि. | 14.10.2004 | 6 | 31.07.2007 | 30.07.2012 |
| 4 | बिरला कॉर्पोरेशन लि. | 14.10.2004 | 3 | 29.03.2007 | 28.03.2012 |
| 5 | एसीसी लि. | 17.10.2004 | 1 व 2 | 30.06.2007 | 29.06.2012 |

7– निगम व सीमेन्ट कम्पनियों के मध्य विवाद की स्थिति होने पर उनके मध्य लिखित करार के अनुसरण में माननीय राजस्थान उच्च न्यायालय के द्वारा धारा 11 माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम की शक्तियों का प्रयोग करते हुए पक्षकारान के विवाद को माध्यस्थम के द्वारा निस्तारित किये जाने हेतु विद्वान एकल पंच महोदय की नियुक्ति की गई। विद्वान एकल पंच महोदय के द्वारा दिनांक 18.02.2015 को आलौच्य पंचाट पारित किया गया। निगम व पांचों सीमेन्ट कम्पनियों के द्वारा आलौच्य पंचाट को अपास्त करने के लिए धारा 34 माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम का आवेदन न्यायालय में पेश किया गया। सीमेन्ट कम्पनियों में से एक कम्पनी अल्ट्राटेक सीमेन्ट लिमिटेड के द्वारा दिनांक 17.03.2015 को विद्वान एकल पंच के सम्मुख अतिरिक्त पंचाट पारित करने हेतु धारा 33(1)(4) माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम के तहत आवेदन पेश किया गया जिसे विद्वान एकल पंच द्वारा बिना कोई अतिरिक्त पंचाट पारित किये, प्रार्थना पत्र को दिनांक 17.05.2015 को अस्वीकार कर

दिया। निगम के द्वारा आलौच्य पंचाट के साथ इस माध्यस्थम आदेश दिनांक 17.05.2015 को भी चुनौती दी गई है।

8– निगम एवं सीमेन्ट कम्पनियों की आलौच्य पंचाट दिनांकित 18.02.2015 व माध्यस्थम आदेश दिनांकित 17.05.2015 को चुनौती देने वाली समेकित आपत्ति प्रार्थना पत्रों अंतर्गत धारा 34 माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम, 1996 के आवेदन पर उभय पक्षकारान को सविस्तार सुना गया।

9– निगम के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री आर.के. अग्रवाल ने अपने आपत्ति प्रार्थना पत्रों एवं सीमेन्ट कम्पनियों की आपत्तियों में पेश किये जवाब की पुनर्रावृत्ति अपने मौखिक बहस में की है और निवेदन किया है कि विद्वान एकल पंच के द्वारा निगम द्वारा उन्हें निवेदित तथ्यों व आपत्तियों के विपरीत जाकर, बिना आधार के, पत्रावली के अभिलेख से परे जाकर आलौच्य अवार्ड दिनांक 18.02.2015 पारित किया है। पारित आलौच्य अवार्ड दिनांक 18.02.2015 व उसके पश्चात् का आदेश दिनांकित 17.05.2015 भारत की लोक नीति के विरूद्ध है। निगम का प्रार्थी सीमेन्ट कम्पनियों से जो करार था, वह प्रारम्भिक रूप से पांच वर्षों हेतु था। इस अवधि के बीत जाने के बाद अनुबंध के अनुसार निगम इस बात के लिए स्वतंत्र था कि वह अनुबंध की शर्तों पर विचार करता और अगर उसे उचित लगता तो वह अनुबंध को आगे अग्रसरित करता। निगम के द्वारा दिनांक 24.08.2011 को फ्लाई ऐश के विक्रय हेतु जो निविदा निकाली गई उस हेतु निगम स्वतंत्र था। विद्वान एकल पंच द्वारा निगम के निविदा निकालने के कार्य को अवैध व गलत बताना अनुचित है। लोक उपक्रम नियमों द्वारा अपनी फ्लाई ऐश को प्रतिस्पर्धात्मक नीलामी प्रक्रिया द्वारा विक्रय करने

हेतु अनुमित है। विद्वान एकल पंच द्वारा अपने आलौच्य पंचाट में यह अंकित किया जाना कि निगम को अपने कोटा थर्मल पावर संयंत्र में स्थित इकाईयों से फ्लाई ऐश को टेंण्डर द्वारा विक्रय करने से पूर्व सीमेन्ट कम्पनियों के साथ नेगोशिएशन करना चाहिए था, गलत अवैध व मनमाना है। विद्वान एकल पंच के द्वारा अपने क्षेत्राधिकार का परित्याग किया गया है। एकल पंच महोदय द्वारा निष्कर्ष पर बिना किसी आधार पर पहूॅचा जाना कि टेण्डर प्रकिया न्यायसंगत नहीं है, उचित नहीं है। निगम एक सरकारी उपक्रम है। सरकारी उपक्रम में और जब सार्वजनिक सम्पत्ति का विक्रय प्रतिस्पर्धात्मक निविदा द्वारा किया जाता है तभी उसे सर्वोत्तम मूल्य प्राप्त होता है। निगम को  पांच वर्षों की अवधि समाप्त होने पर यह स्वतंत्रता था कि वह नियमानुसार स्वविवेकानुसार प्रतिस्पर्धात्मक निविदा द्वारा फ्लाई ऐश का विक्रय करें। सीमेन्ट कम्पनियों द्वारा निगम के साथ लिखित अनुबंध होने से पूर्व पांच वर्ष से अधिक समय के लिए बिना कोई राशि लिए मुफ्त में फ्लाई ऐश उठायी गई है और सीमेन्ट कम्पनियों में इस मुफ्त में उठायी गई फ्लाई ऐश का विवरण अपनी आपत्तियों में पेश नहीं किया गया है। फ्लाई ऐश का सही बाजार मूल्य का निर्धारण निविदा के द्वारा हो सकता है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा प्रथम दृष्टया ही 250 /– रूपये प्रति मेट्रिक टक विक्रय मूल्य निर्धारित किया गया था। विद्वान एकल पंच को समग्र तथ्यों और परिस्थितियों पर विचारोपरान्त कम से कम 481 /– रूपये प्रति मेट्रिक टन मूल्य फ्लाई ऐश का दिलवाया जाना चाहिए था। विद्वान एकल पंच के द्वारा जो अपने अवार्ड में 9 प्रतिशत की ब्याज राशि दिलायी गई है वह भी गलत दिलायी गई है, वह भी कम से कम 18 प्रतिशत ब्याज की राशि दिलवायी जानी चाहिए थी। निगम की जब सीमेन्ट कम्पनियों से उनके कमिशनिंग से अनुबंध की

अवधि पांच वर्ष में समाप्त हो चुकी थी तब निगम कोटा सुपर थर्मल पावर संयंत्र की एक से छः इकाईयों में प्रतिस्पर्धात्मक निविदा प्रकिया द्वारा मूल्य प्राप्त करने का अधिकारी था। इस तथ्य पर विद्वान एकल पंच को कोई तवज्जो नहीं दी गई है। विद्वान एकल पंच के द्वारा निगम व सीमेन्ट कम्पनियों के बीच हुए अनुबंधों का गलत अर्थ निकलता है। सीमेन्ट कम्पनियों के पांच वर्ष की अवधि वर्ष 2012 में समाप्त हो चुकी थी। स्वयं सीमेन्ट कम्पनियों के पास ऐसा कोई विधिक अथवा अन्य अधिकार नहीं था जिससे वे निगम की सहमति एवं पुनर्विचार के बिना निगम को अगले पांच वर्षों यथा 2012 से 2017 तक अनुबंध को नवीनीकरण करवाने हेतु विवश करें। माध्यस्थम आदेश दिनांक 17.05.2017 जिसके द्वारा यह आदेश दिया गया था कि सीमेन्ट कम्पनियॉ 2012 के पश्चात् अगले पांच वर्षों तक अनुबंध को जारी रखने की अधिकारी है। यह आदेश विधि के सर्वथा विपरीत है। एक तरफ तो विद्वान एकल पंच के द्वारा दिनांक 17.05.2015 को प्राथी सीमेन्ट कम्पनियों का आवेदन अन्तर्गत धारा 33 माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम खारिज कर दिया गया है लेकिन इसके बावजूद सीमेन्ट कम्पनियों के हक में अनुचित जाकर, विधि के विरूद्ध जाकर विवेचन किया है, जो दुर्भाग्यपूर्ण है एवं न्याय के मानकों के खिलाफ है। विद्वान एकल पंच के द्वारा सीमेन्ट कम्पनियों व निगम के बीच में हुए अनुबंध को नजरअंदाज किया है। सीमेन्ट कम्पनी व निगम के बीच में अनुबंध एक पैकेज एग्रीमेंट था जिसमें सीमेन्ट कम्पनियों के द्वारा उनके स्वयं के खर्चे पर फ्लाई ऐश का संग्रहण एवं उठाने हेतु सिस्टम को स्थापित करना था और उसकी एवज में बिना कोई राशि अदा किये फ्लाई ऐश का उपयोग करना था। जब व्यावसायिक रूप से देखा जाये तो सीमेन्ट कम्पनियों ने उनके कथन के अनुसार करीब 8 वर्ष की अवधि तक जो कि 2012 तक

थी, मुफ्त की फ्लाई ऐश प्राप्त कर लाभ लिया है। विद्वान एकल पंच ने जो धारा 33 माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम का आवेदन दिनांक 17.05.2015 को निर्णीत किया है वह माध्यस्थम अभिकरण की शक्ति से बाहर का है और माध्यस्थम अधिकरण ने अपने क्षेत्राधिकार से बाहर जाकर आलौच अवार्ड व आदेश पारित किया है। विद्वान एकल पंच द्वारा अपने आलौच्य अवार्ड व दिनांक 17.05.2015 के आदेश को पारित करते हुए निगम के द्वारा पेश किये अभिवचनों व दस्तावेजों पर पर्याप्त तवज्जो नहीं दी है। विद्वान एकल पंच का अवार्ड व आदेश विकृत, अतार्किक, कानूनन अपोषणीय व क्षेत्राधिकार के बाहर है। विद्वान अधिवक्ता निगम ने आलौच्य अवार्ड दिनांकित 18.02.2015 को जिसके द्वारा निविदा प्रक्रिया को अवैध करार दिया गया, उस हद तक आलौच्य अवार्ड को अपने वांछित अनुतोष की हद तक अपास्त करने का निवेदन किया तथा सीमेन्ट कम्पनियों को 2012 से दिनांक 01.01.2015 तक 460/– रूपये प्रति मेट्रिक टन व दिनांक 01.01.2015 से 481/– रूपये प्रति मेट्रिक टन प्रतिफल राशि फ्लाई ऐश के पेटे निगम को दिलवाये जाने का निवेदन किया है और साथ ही माध्यस्थम आदेश दिनांक 17.05.2015 को अपास्त करने का भी निवेदन किया। विद्वान अधिवक्ता निगम ने अपने तर्कों के समर्थन में निम्नलिखित न्यायिक दृष्टांत पेश किये है–

1. **(2012) 12 SCC 581 - State of Goa v. Praveen Enterprises**
*माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में मत व्यक्त किया है कि जहां माध्यस्थम को सभी विवाद संदर्भित किये गये हो वहां माध्यस्थम को दावे एवं प्रतिदावे के अभिवचनों में उठाये*

*गये सभी विवादों को निस्तारित करने का क्षेत्राधिकार होता है। माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह मत भी व्यक्त किया है कि जब धारा 23 माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम को धारा 2 (9) के सानिध्य में पढ़ा जाता है तब जब तक कि पक्षकारान के द्वारा अन्यथा करारित नहीं हो, प्रत्यर्थी को जवाबदावा पेश करने का अधिकार होता है।*

**2. (2019) 10 SCC 250 – Bharat Petroleum Corporation Limited v. Go Airlines (India) Limited**

*माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में गोवा बनाम प्रवीण एन्टरप्राईजेज के मत को स्वीकार किया गया है जिसके अनुसार प्रत्यर्थी को माध्यस्थम के समक्ष प्रतिदावा पेश करने का अधिकार रहता है।*

**3. (2014) 11 SCC 366 - Union of India v. Pam Development (P) Ltd.**

माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में मत व्यक्त किया है कि –

*"Section 16 of the Arbitration Act, 1996 provides that the Arbitral Tribunal may rule on its own jurisdiction. Section 16 clearly recognises the principle of kompetenz-kompetenz. Section 16(2) mandates that a plea that the Arbitral Tribunal does not have jurisdiction shall be*

*raised not later than the submission of the statement of defence. Section 4 provides that a party who knows that any requirement under the arbitration agreement has not been complied with and yet proceeds with the arbitration without stating his objection to such non-compliance without undue delay shall be deemed to have waived his right to so object.”*

**4. (2016) 12 SCC 678 - Rajesh Verma v. Ashwani Kumar Khanna**

*“It is a settled principle of law that jurisdiction of court under Section 11 of the Act is limited and confined to examine as to whether there is an arbitration agreement between the contracting parties and, if so, whether any dispute has arisen between them out of such agreement which may call for appointment of arbitrator to decide such disputes. Once it is held that disputes had arisen between the parties in relation to agreement which contained an arbitration clause for resolving such disputes, the court should have made reference to the arbitrator leaving the parties to approach the arbitrator with their claim and counterclaim to enable the arbitrator to decide all such disputes on the basis of case set up by*

*the parties before him. In this case, we find that the learned Single Judge did exceed his jurisdiction on this issue and hence interference to this extent is called for."*

***5. (2015) 3 SCC 112 - Manoj I Naik & Associates v. Official Liquidator-***

*माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में मत व्यक्त किया है और राम एण्ड श्याम कम्पनी बनाम स्टेट ऑफ हरियाणा नजीर को विवेचित करते हुए प्रेक्षित किया गया –*

*"Owner of private property may deal with it in any manner he likes without causing injury to any one else. But the socialist or if that word is jarring to some, the community or further the public property has to be dealt with for public purpose and in public interest. The marked difference lies in this that while the owner of private property may have a number of considerations which may permit him to dispose of his property for a song. On the other hand, disposal of public property partakes the character of a trust in that in its disposal there should be nothing hanky panky and that it must be done at the best price so that larger revenue coming into the coffers of the State administration would serve public purpose viz. the welfare State may be able to expand its beneficent*

*activities by the availability of larger funds. This is subject to one important limitation that socialist property may be disposed at a price lower than the market price or even for a token price to achieve some defined constitutionally recognised public purpose, one such being to achieve the goals set out in Part IV of the Constitution. But where disposal is for augmentation of revenue and nothing else, the State is under an obligation to secure the best market price available in a market economy. An owner of private property need not auction it nor is he bound to dispose it of at a current market price. Factors such as personal attachment, or affinity, kinship, empathy, religious sentiment or limiting the choice to whom he may be willing to sell, may permit him to sell the property at a song and without demur. A welfare State as the owner of the public property has no such freedom while disposing of the public property. A welfare State exists for the largest good of the largest number more so when it proclaims to be a socialist State dedicated to eradication of poverty. All its attempt must be to obtain the best available price while disposing of its property because the greater the revenue, the welfare activities will get a fillip and shot in the arm.*

*Financial constraint may weaken the tempo of activities. Such an approach serves the larger public purpose of expanding welfare activities primarily for which the Constitution envisages the setting up of a welfare State."*

***6. (1986) 3 SCC 391 - Chenchu Rami Reddy v. Govt. of A.P.***

*माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में मत व्यक्त किया है कि—*

*"We cannot conclude without observing that property of such institutions or endowments must be jealously protected. It must be protected, for, a large segment of the community has beneficial interest in it (that is the raison d'etre of the Act itself). The authorities exercising the powers under the Act must not only be most alert and vigilant in such matters but also show awareness of the ways of the present day world as also the ugly realities of the world of today. They cannot afford to take things at their face value or make a less than the closest-and-best-attention approach to guard against all pitfalls. The approving authority must be aware that in such matters the trustees, or persons authorised to sell by private negotiations, can, in a given case, enter into a secret or*

*invisible underhand deal or understanding with the purchasers at the cost of the concerned institution. Those who are willing to purchase by private negotiations can also bid at a public auction. Why would they feel shy or be deterred from bidding at a public auction? Why then permit sale by private negotiations which will not be visible to the public eye and may even give rise to public suspicion unless there are special reasons to justify doing so? And care must be taken to fix a reserve price after ascertaining the market value for the sake of safeguarding the interest of the endowment. With these words of caution we close the matter."*

*माननीय न्यायालय ने प्रेक्षित किया कि जिन अधिकारियों की सार संभाल में लोक सम्पत्ति रहती है उन्हें उदाहरणीय सतर्कता दिखानी चाहिए। उस मामले में एक भूमि का विक्रय प्राईवेट नेगोशिएशन से किया गया। सम्पत्ति को 20 लाख में बेचा गया जबकि अपीलांट लोक नीलामी में उसे 80 लाख रूपये तक खरीदने में तैयार थे। न्यायालय ने इस मामले में सम्पत्ति का लोक विक्रय लोक नीलामी द्वारा नहीं करने पर काफी गंभीर प्रश्न खड़े किये गये।*

***7. (2018) 9 SCC 617 - Bharmal Medical Store v. State of M.P.***

*माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में मत व्यक्त किया है कि यह बेहतर है कि प्रत्यर्थी अस्पताल परिसर में प्रश्नगत दुकानों के विक्रय के लिए विवृत्त लोक नीलामी की प्रक्रिया को अपनाये।*

***8. (2001) 2 SCC 326 - State of W.B. v. Niranjan Singha***

माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में मत व्यक्त किया है कि –

*An extension of an agreement or renewal is granted on the expiry of the period of the existing agreement. Either the extension or the renewal of the existing agreement may be on the same terms or on different terms. If it is a case of extension of the existing agreement on the same terms and conditions and such consideration gives rise to a question of legitimate expectation being a part of the agreement concerned, economic consideration of getting higher bid for the same period would be a relevant consideration. If the governmental authorities had found that it would be feasible to have the agency, as in the present case, on fresh terms by enhancing the amount payable to the Government, it would be a relevant factor and in such a case it cannot be said that the legitimate expectation of the*

*respondent had been affected because the public interest would outweigh the extension of the period of the agreement. The doctrine of "legitimate expectation" is only an aspect of Article 14 of the Constitution in dealing with the citizens in a non-arbitrary manner and thus, by itself, does not give rise to an enforceable right but in testing the action taken by the government authority whether arbitrary or otherwise it would be relevant. The decision in Food Corpn. of India v. Kamdhenu Cattle Feed Industries1 does not lay down any principle which detracts from what we have stated now. In a case where the agency is granted for collection of toll or taxes, as in the present case, it can be easily discerned that the claim of the respondent for extension of the period of the agency would not come in the way of the Government if it is economically more beneficial to have a fresh agreement by enhancing the consideration payable to the Government. In such an event, it cannot be said that the action of the Government inviting fresh bids is arbitrary. Moreover, the respondent can also participate in the tender process and get his bid considered. Hence, we do not think that the view taken by the High Court can be justified.*

*We set aside the order made by the Division Bench affirming the order of the learned Single Judge in the writ proceedings and dismiss the writ petition. However, it is made clear that until fresh arrangements are made, the terms upon which the agency has been granted in favour of the respondent may continue.*

*माननीय सर्वोच्च न्यायालय के अनुसार वैधानिक प्रत्याशा भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 का एक आयाम है। इसका मकसद है कि जब नागरिकों के साथ व्यवहार किया जाये तो वह मनमाना नहीं हो। यह स्वयं में कोई प्रर्वतनीय अधिकार नहीं देता है परन्तु यह सरकार द्वारा किये गये कृत्यों का परीक्षण करता है कि प्राधिकारी मनमाने है या अन्यथा ये सूसंगत है। प्रकरण में उच्च न्यायालय के एकल पीठ के निर्णय को अपास्त किया गया।*

***9. (1991) 1 SCC 533 - Indian Oil Corpn. Ltd. v. Amritsar Gas Service***

माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में यह मत व्यक्त किया है कि –

*"We may at the outset mention that it is not necessary in the present case to go into the constitutional limitations of Article 14 of the Constitution to which the appellant-Corporation as an instrumentality of the State would be*

*subject particularly in view of the recent decisions of this Court in Dwarkadas Marfatia and Sons v. Board of Trustees of the Port of Bombay, Mahabir Auto Stores v. Indian Oil Corporation and Shrilekha Vidyarthi v. State of U.P. This is on account of the fact that the suit was based only on breach of contract and remedies flowing therefrom and it is on this basis alone that the arbitrator has given his award. Shri Salve is, therefore, right in contending that the further questions of public law based on Article 14 of the Constitution do not arise for decision in the present case and the matter must be decided strictly in the realm of private law rights governed by the general law relating to contracts with reference to the provisions of the Specific Relief Act providing for non-enforceability of certain types of contracts. It is, therefore, in this background that we proceed to consider and decide the contentions raised before us."*

***10. (2009) 4 SCC 357 - S.K. Jain v. State of Haryana***

माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में यह मत व्यक्त किया है कि –

*"....There is no compulsion on anyone to enter into these contracts. It is voluntary on both sides. There can be no question of the State power being involved in such contracts. It bears repetition to say that the State does not guarantee profit to the licensees in such contracts. There is no warranty against incurring losses. It is a business for the licensees. Whether they make profit or incur loss is no concern of the State. In law, it is entitled to its money under the contract. It is not as if the licensees are going to pay more to the State in case they make substantial profits. We reiterate that what we have said hereinabove is in the context of contracts entered into between the State and its citizens pursuant to public auction, floating of tenders or by negotiation. It is not necessary to say more than this for the purpose of these cases. What would be the position in the case of contracts entered into otherwise than by public auction, floating of tenders or negotiation, we need not express any opinion herein."*

***11. (2007) 13 SCC 236 - Security Printing and Minting Corpn. of India Ltd. v. Gandhi Industrial Corpn.***

माननीय न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में यह मत व्यक्त किया है कि –

"*The view taken by the arbitrator that since it was not the condition when the tender was floated is not correct as after the complete contract having come into existence, there is no purpose to refer to the terms of tender. What is binding is the completed contract and not the terms of offer of the advertisement. Whatever may be the offers in the advertisement, once the completed contract has come into existence, this is binding. There are no two opinions in the matter in the present case that the terms and conditions of the supply order dated 31-5-1995 were complete. Therefore, what is binding is the terms of the contract and not the terms in the offer of advertisement. Therefore, under these circumstances the view taken by the arbitrator as well as the learned Single Judge and the Division Bench of the High Court is ex facie illegal. It is true that normally the courts are very slow in interfering with the finding and interpretation given by the arbitrator. So far as the principle of law is concerned, there are no two opinions and it has to be accepted. But the fact remains that if any perverse order is passed, then the*

*courts are not powerless to interfere with the matter. As pointed out above, once the concluded contract has come into existence, then in that case the offer of advertisement cannot override the terms and conditions of the completed contract. Therefore, in our opinion, the view taken by the arbitrator, as affirmed by learned Single Judge and the Division Bench of the High Court on the face of it is illegal and against the law.*

***12. (2019) 20 SCC 1 - Dyna Technologies (P) Ltd. v. Crompton Greaves Ltd.***

माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत के पैरा संख्या 26 व 35 में यह मत व्यक्त किया है कि –

*"Having established the basic jurisprudence behind Section 34 of the Arbitration Act, we must focus on the analysis of the case. The primary contention of the learned counsel appearing on behalf of the appellant is that the award by the learned Tribunal was perverse for want of reasons. The necessity of providing reasons has been provided under Section 31 of the Arbitration Act, which reads as under:*

*"**31. Form and contents of arbitral award**.—(1)-(2) * * **

*(3) The arbitral award shall state the reasons upon which it is based, unless—*

*(a) the parties have agreed that no reasons are to be given, or*

*(b) the award is an arbitral award on agreed terms under Section 30."*

*When we consider the requirement of a reasoned order, three characteristics of a reasoned order can be fathomed. They are: proper, intelligible and adequate. If the reasonings in the order are improper, they reveal a flaw in the decision-making process. If the challenge to an award is based on impropriety or perversity in the reasoning, then it can be challenged strictly on the grounds provided under Section 34 of the Arbitration Act. If the challenge to an award is based on the ground that the same is unintelligible, the same would be equivalent of providing no reasons at all. Coming to the last aspect concerning the challenge on adequacy of reasons, the Court while exercising jurisdiction under Section 34 has to adjudicate the validity of such an award based on the degree of particularity of reasoning required having regard to the nature of issues falling for consideration.*

*The degree of particularity cannot be stated in a precise manner as the same would depend on the complexity of the issue. Even if the Court comes to a conclusion that there were gaps in the reasoning for the conclusions reached by the Tribunal, the Court needs to have regard to the documents submitted by the parties and the contentions raised before the Tribunal so that awards with inadequate reasons are not set aside in casual and cavalier manner. On the other hand, ordinarily unintelligible awards are to be set aside, subject to party autonomy to do away with the reasoned award. Therefore, the courts are required to be careful while distinguishing between inadequacy of reasons in an award and unintelligible awards.*

***13. AIR 1977 MP 68 (Full Bench) - State Of Madhya Pradesh v. Ramcharan***

माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में यह मत व्यक्त किया है कि –

*".....These cases show that a notification issued under statutory power exempting certain matter from the general provisions of the statute is legislative in nature and has the force of law."*

*As a result of the above discussion, it is clear that under our legal order and jurisprudence based on the Constitution, "law" is not limited to legislative enactments. All forms of delegated legislation and conditional legislation amount to law. All orders and notifications made and issued under statutory powers and which are legislative in nature amount to law. A statutory order or notification will be legislative in nature if in substance it adds to, supplements, modifies or amends a statute or exempts certain matters from its operation.*

**14. (2004) 3 SCC 429 - State of Kerala v. Chandramohanan**

माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में यह मत व्यक्त किया है कि –

"*Learned counsel for the appellant has drawn our attention to the circulars issued by the State of Kerala with a view to show that the members of the tribes are being treated in the same capacity despite conversion. We are afraid that such circulars being not law within the meaning of Article 13 of the Constitution of India, would be of no assistance.*

***15. (2007) 4 SCC 697 - Food Corpn. of India v. Chandu Construction***

माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में यह मत व्यक्त किया है कि –

*"Parties having accepted the terms of the agreement dated 19-9-1984, they were bound by its terms and so was the arbitrator. It is, thus, clear that the claim awarded by the arbitrator is contrary to the unambiguous terms of the contract. We are of the view that the arbitrator was not justified in ignoring the express terms of the contract merely on the ground that in another contract for a similar work, extra payment for material was provided for. It was not open to the arbitrator to travel beyond the terms of the contract even if he was convinced that the rate quoted by the claimants was low and another contractor, namely, M/s Gupta and Company had been separately paid for the material. The claimants' claim had to be adjudicated by the specific terms of their agreement with FCI and no other.*

***16. (2006) 1 SCC 86 - State of Rajasthan v. Nav Bharat Construction Co.***

माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में यह मत व्यक्त किया है कि–

*There can be no dispute to the well-established principle set out in these cases. However, these cases do not detract from the law laid down in Bharat Coking Coal Ltd. case or Continental Construction Co. Ltd. case. An arbitrator cannot go beyond the terms of the contract between the parties. In the guise of doing justice he cannot award contrary to the terms of the contract. If he does so, he will have misconducted himself. Of course if an interpretation of a term of the contract is involved then the interpretation of the arbitrator must be accepted unless it is one which could not be reasonably possible. However, where the term of the contract is clear and unambiguous the arbitrator cannot ignore it.*

***17. AIR 2019 Rajasthan 45 (D.B.) - Ultratech Cement Limited VS Rajasthan Rajya Vidyut Utpadan Nigam Ltd.***

माननीय न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में यह मत व्यक्त किया है कि–

*It is well settled that wherever the terms and conditions of an existing agreement need to varied/agreed upon afresh for it to sustain after the expiry of the mutually agreed terms, the exercise jurisprudentially partakes the*

*character of a renewal not an extension. In the instant case, admittedly the free supply for Dry Fly Ash generated at unit 3 and unit 4 of CTPP was contemplated under the MOU dated 9.9.2008 free of cost, for the first 5 years with reference to the date of their respective commissioning. But it was equally clearly provided by clause 2.8 and 6 of the MOU in issue that if the Government were to subsequently require cessation of the free supply, the extension for the further period of 5 years was to be on mutually agreed price of dry fly ash. The MoEF Notification dated 3.11.2009 had put to an end the regime of free supply of Dry Fly Ash and obliged the Thermal Power Plants to obtain the best possible price therefor through competitive bidding. It cannot also be denied that Dry Fly Ash now has a market value and as a by-product of the State's or its instrumentality's economic activity of generation of thermal power, has, except for compelling reason, to be sold in a transparent manner to the highest bidder for the maximization of public revenues. The equities of the case as set up, in the circumstances, are also wholly against the plaintiff who seeks free appropriation of the dry fly ash. The plaintiff has also not*

*been able to prima-facie satisfy this Court as to how the MOU determinable in nature as it is, is specifically enforceable under Section 14 of the Act of 1963 and when it is not so, why the statutory prohibition against the grant of injunction in such a situation as provided under Section 41(e) of the Act of 1963 should not attract to its case. It is important to note that the plaintiff itself has not filed a suit for specific performance of contract as evidently in the state of law which obtains – Section 10 of the Act of 1963 - it could not. The prayer for declaration instead made, in the suit is only a red herring as it prima-facie appears that under Section 34 of the Act of 1963 a declaration is obtainable in a civil suit only qua a legal character as contra distinguished from a contractual right and a right to immovable property. None of the two situations (i) of the plaintiff seeking declaration of a legal character or (ii) asserting a right to immovable property in its suit prima-facie obtains in the instant case notwithstanding the plaintiff's apparently far-fetched case of being a licensee of the defendant. Besides for a plain breach of a contract otherwise than one specifically enforceable the plaintiff in*

*law can only seek compensation/damages on proving the defendant's breach.*

***18. (1987) 2 SCC 555 – Ram Sarup Gupta v. Bishun Narain Inter College***

माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में यह मत व्यक्त किया है कि–

*"Licence as defined by Section 52 of the Act means grant of permission, by a person to the other, a right to do or continue to do, in or upon, the immovable property of the grantor, something which would, in the absence of such right, be unlawful. Such right does not amount to an easement or any interest in the property. The rights so conferred is licence. The grant of licence may be express or implied which can be inferred from the conduct of the grantor. Section 60 provides that a licence may be revoked by the grantor unless: (a) it is coupled with a transfer of property and such transfer is in force; (b) the licensee, acting upon the licence, has executed a work of permanent character and incurred expenses in the execution. Revocation of licence may be express or implied. Section 62 enumerates circumstances on the existence of which the licence is deemed to be revoked. One of such conditions*

*contemplates that where licence is granted for a specific purpose and the purpose is attained, or abandoned, or if it becomes impracticable, the licence shall be deemed to be revoked. Sections 63 and 64 deal with licensee's right on revocation of the licence to have a reasonable time to leave the property and remove the goods which he may have placed on the property and the licensee is further entitled to compensation if the licence was granted for consideration and the licence was terminated without any fault of his own. These provisions indicate that a licence is revocable at the will of the grantor and the revocation may be expressed or implied."*

***19. (2010) 10 SCC 422 - Mumbai International Airport (P) Ltd. v. Golden Chariot Airport***

माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में यह मत व्यक्त किया है कि–

*"Is an action at law a game of chess? Can a litigant change and choose its stand to suit its convenience and prolong a civil litigation on such prevaricated pleas?*

*This Court has also applied the doctrine of election in C. Beepathuma v. Velasari Shankaranarayana*

*Kadambolithaya wherein this Court at AIR p. 246, para 17 relied on Maitland as saying:*

*"That he who accepts a benefit under a deed or will or other instrument must adopt the whole contents of that instrument, must conform to all its provisions and renounce all rights that are inconsistent with it." (Maitland's Lectures on Equity, Lecture 18.)*

*Therefore, the conduct of the contesting respondent in view of its inconsistent pleas is far from satisfactory. By taking such pleas, the contesting respondent has succeeded in enjoying the possession of the premises for the last 10 years even after the expiry of its licence on 26-5-2000*

*However, from the facts discussed above, it is amply demonstrated that the contesting respondent has blown hot and cold by taking inconsistent stands, and has therefore prolonged several proceedings for more than a decade. This Court is constrained to hold that it did not pursue its proceedings honestly in different fora. Therefore, the appeal, being Misc. Appeal No. 50 of 2010, filed by the contesting respondent before the Principal Judge, City Civil Court, Mumbai, which was transferred to this Court by this Court's order dated 11-5-2010 and formed part of*

*these appeals, is dismissed with costs assessed at Rs. 5,00,000 to be paid by the contesting respondent in favour of the Supreme Court Mediation Centre within a period of two months from date.*

***20. (2004) 3 SCC 595 - C.M. Beena v. P.N. Ramachandra Rao***

माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में यह मत व्यक्त किया है कि–

*"A few principles are well settled. User of the terms like "lease" or "licence", "lessor" or "licensor", "rent" or "licence fee" is not by itself decisive of the nature of the right created by the document. An effort should be made to find out whether the deed confers a right to possess exclusively coupled with transfer of a right to enjoy the property or what has been parted with is merely a right to use the property while the possession is retained by the owner. The conduct of the parties before and after the creation of relationship is of relevance for finding out their intention.*

*".... A contractual licence confers no more than a permission on the occupier to do some act on the owner's land which would otherwise constitute a trespass. ...."*

*".... A grant under which the grantee takes only the right to use the premises without being entitled to exclusive possession must operate as a licence and not as a lease. ....*

*... regard must be had to the substance rather than the form of the agreement, for the relationship between the parties is determined by the law and not by the label which they choose to put on it. It has been said that the law will not impute an intention to enter into the legal relation of landlord and tenant where circumstances and conduct negative that intention; ....."*

***21. AIR 1968 SC 175 - B. M. Lall v. Dunlop Rubber Company India Ltd.***

माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में यह मत व्यक्त किया है कि–

*"The question is whether the occupier under this agreement is a tenant or a licensee. The distinction between a leave and a license is well known. Section 105 of the Transfer of Property Act defines a lease. Section 52 of the Indian Easement Act defines a license. A lease is the transfer of a right to enjoy the premises; where-as a license is a privilege to do something on the Premises which otherwise would be unlawful. If the agreement is in writing it is a question of construction of the*

*agreement having regard to its terms and when its, language is ambiguous, having regard to tits object, and the circumstances uncle which it was executed whether the rights of the occupier are those of a lessee or a licensee. The transaction is a lease if it grants an interest in the land; it is a license if it gives a personal privilege with no interest in the land. The question is not of words but of substance and the label which the parties choose to put upon the transaction, though relevant not decisive...."*

*xxxx.*

*"....The agreement on its true construction read in the light of the surrounding circumstances operates as a License and not as a tenancy. It creates no interest in the land. It gives only a personal privilege or license to the servant to occupy the premises for the greater convenience of his work."*

**22. (2016) 0 Supreme (Bom) 12 - *Messrs Miscellenary Marketers Pvt. Ltd. VS Messrs SunNSand Pvt. Ltd.***

माननीय न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में यह मत व्यक्त किया है कि–

*"Apart from the aforesaid evidence which is vital, the attendant circumstances also assume importance in so far as the present case is concerned. As indicated above, the*

*shops are situated in the lobby of the hotel building, amongst which is the suit shop. It is an undisputed position that there is only one entrance to the hotel building and if the said entrance is locked then the suit premises cannot be accessed from the outside. There is also a internal locking system to the main gate and the keys of the main gate remain with the Plaintiffs. The said fact therefore proves that the total control was that of the Plaintiffs in the matter of entry to the hotel premises. It is also required to be noted that the Plaintiffs were also levying hotel expenditure tax on the Defendants which tax is levied on the guests residing in the hotel. The receipts issued by the Plaintiffs for the amount received from the Defendants as and by way of consideration also show that the amounts were shown as compensation and not rent. As indicated above, the licence granted to the Defendants was for selling merchandise in the hotel for which space was provided by the Plaintiffs. The suit premises therefore assume secondary importance and the licence granted can therefore in no way create any right or interest in the Defendants in so far as the shop premises are concerned.*

*Now, coming to the contention urged on behalf of the Applicants that the Plaintiffs could not have filed the said LE & C suit prior to 1997 i.e. the date on which licence on renewal was come to an end and therefore the suit filed in the year 1995 was premature. In my view, the said contention is misfounded. Though by clause (1) of the agreement dated 01.10.1994 a renewal of two years was provided which was to end on 30.09.1997. The said renewal clause cannot be said to be automatic and necessitated an overt act on the part of the Plaintiffs in the matter of renewing the licence. Since the Plaintiffs have not renewed the licence, the same has come to an end by efflux of time on 30.09.1995. In so far as the termination or revocation of the agreement is concerned, it is required to be noted that only in the circumstances mentioned in Section 60 of the Easements Act that the licence cannot be revoked. The instant case is not a case which can be said to be covered by the two circumstances mentioned in Section 60 of the said Act. In fact, Section 62 provides for a deemed revocation in the circumstances mentioned therein. Hence when the Easements Act provides for a revocation of the licence except in the circumstances*

*covered by Section 60 and when the said Act also provides for a deemed revocation, the Plaintiffs were surely entitled to revoke the license in the absence of any power in the agreement. The Plaintiffs have accordingly done so by the notice dated 31.08.1995 and therefore on revocation the Plaintiffs were entitled to seek possession of the premises from which the Defendants were carrying out business in terms of the licence granted to them.*

**REGISTRATION ACT/IMMOVABLE PROPERTY**

***23. (2000) 1 SCC 633 - Duncans Industries Ltd. v. State of U.P.***

माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में यह मत व्यक्त किया है कि–

*"...The question whether a machinery which is embedded in the earth is moveable property or an immovable property, depends upon the facts and circumstances of each case. Primarily, the court will have to take into consideration the intention of the parties (sic party) when it decided to embed the machinery, whether such embedment was intended to be temporary or permanent..."*

*xxxx.*

*"....The Court considering the said question will have to take into consideration the intention of the parties which embedded the machinery and also the intention of the parties who intend alienating that machinery...."*

***24. (1998) 1 SCC 400 - Sirpur Paper Mills Ltd. v. CCE***

माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में यह मत व्यक्त किया है कि–

*"Apart from this finding of fact made by the Tribunal, the point advanced on behalf of the appellant, that whatever is embedded in earth must be treated as immovable property is basically not sound. For example, a factory owner or a householder may purchase a water pump and fix it on a cement base for operational efficiency and also for security. That will not make the water pump an item of immovable property. Some of the components of the water pump may even be assembled on site. That too will not make any difference to the principle. The test is whether the paper-making machine can be sold in the market. The Tribunal has found as a fact that it can be sold. In view of that finding, we are unable to uphold the contention of the appellant that the machine must be treated as a part of the*

*immovable property of the Company. Just because a plant and machinery are fixed in the earth for better functioning, it does not automatically become an immovable property.*

***25. AIR 1975 All. 373 (D.B.) - Babu Fazal Haq Vs Lala Data Ram***

माननीय न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में यह मत व्यक्त किया है कि–

*As the very definition of the two terms indicates, the essence of the distinction lies in the fact as to whether the agreement intended to create an interest in the property or it only permitted the other party to make use of the property for a particular purpose which but for the permission would be unlawful. If the agreement does not transfer any estate to the defendant, then he would be merely a licensee having a permissive occupation. The right of ownership is a bundle of rights which the owner is entitled to enjoy at his place. He is also at liberty to dispose of or grant the use of any of these rights to other persons. Such disposition or action may be exclusive, extinguishing the enjoyment of such right in him and vesting it to a person to whom the grant is made, or it may be only restrictive, restricting the enjoyment of such right*

*by the grantor to the extent it is to be enjoyed by the grantee. In the former case it is the grant of interest in the property itself, while in the latter case it is only the grant of right of enjoyent or licence. On the findings recorded in the present case it is not possible to come to the conclusion that the agreement between the parties betrays any intention to transfer an interest in the property to the defendants. The object of the plaintiff clearly was to permit the defendants to use the land for making of constructions and establishing a factory over it without specification of any period. It is true that the defendants in their written statements state that their position had been that of permanent tenants. In his evidence also the defendant No. 1 stated that he entered into a contract of tenancy with the plaintiff, his wife and wifes sister under which he was given the disputed land on a monthly rental of Rs. 15/- per month. He also deposed that the plaintiff had given him the land for permanent possession and occupation and on rent. But the mere use of the term "rent" is not conclusive of the nature of the transaction. It is the substance which is to be seen and not the label applied. We have no doubt that the defendant No. 1 in his*

*evidence used the word "rent" loosely. According to the findings of the courts below all that the defendants were permitted to do was to subject the land to a particular kind of use. The theory of permanent tenancy pleaded by the defendants has been totally rejected by the two courts below. It has been categorically held that there was no agreement conferring any right on the defendants to hold the land for any particular period. By the mere fact that a plot of land is given for making constructions over it, the transaction cannot necessarily be said to be one of lease and not one of licence. The lease is a transfer of interest in the property whereas the licence is not. In other words, the licence is a personal right whereas the lease is a right in the property. The classic definition of licence was propounded by Vaughan, C. J. in the Seventeenth Century in Thomas v. Sorrell, (1673) 124 ER 1098 as follows :*

*"a dispensation or licence properly passeth no interest, nor alters or transfers property in any thing, but only makes an action lawful, which without it had been unalwful. " The difference between a tenancy and a licence is, therefore, that in a tenancy an interest passes in the land, whereas in a licence it does not. In the present*

*litigation it was not the case of either party that any interest in the property was transferred by them. Their case merely was that the defendants were given a right to do certain acts on the disputed land which would have been unlawful in the absence of such licence. In other words, it was only a personal privilege granted to the defendants with no interest in the land itself.*

*The most important contention urged by the learned counsel for the appellant was that the land in dispute was for all intents and purposes given to the exclusive possession of the defendants and this was conclusive of the fact that the defendants were lessees. This argument is untenable and cannot be endorsed in view of the present state of law on the subject. As observed by Subba Rao, J. in the case of Associated Hotels of India AIR 1959 SC 1262 (supra ). "at one time it was thought that the test of exclusive possession was infallible and if a person was given exclusive possession of a premises, it would conclusively establish that he was a lessee. But there was a change and the recent trend of judicial opinion is reflected in Errington v. Errington, (1952) 1 All ER 149 wherein Lord Denning reviewing the case law on the*

*subject summarizes the result of his discussion thus at p. 155 : the result of all these cases is that, although a person who is let into exclusive possession is prima facie, to be considered to be tenant, nevertheless he will not be held to be so if the circumstances negative any intention to create a tenancy. "*

*The Court of Appeal again in Cobb v. Lane, (1952) 1 All ER 1199, considered the legal position and laid down that the intention of the parties was the real test for ascertaining the character of a document. At p. 1201 Somervell, L. J. stated :*

*". . . . . . . . . . . . . . . the solution that would seem to have found is, as one would expect, that it must depend on the intention of the parties. "*

*Denning, L. J. said much to the same effect at p. 1202 : "the question in all these cases is one of intention : Did the circumstances and the conduct of the parties show that all that was intended was that the occupier should have a personal privilege with no interest in the land?"*

*25.* ***(2019) 15 SCC 131 - Ssangyong Engg. & Construction Co. Ltd. v. NHAI***

माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में यह मत व्यक्त किया है कि–

*To elucidate, para 42.1 of Associate Builders, namely, a mere contravention of the substantive law of India, by itself, is no longer a ground available to set aside an arbitral award. Para 42.2 of Associate Builders, however, would remain, for if an arbitrator gives no reasons for an award and contravenes Section 31(3) of the 1996 Act, that would certainly amount to a patent illegality on the face of the award.*

*The change made in Section 28(3) by the Amendment Act really follows what is stated in paras 42.3 to 45 in Associate Builders, namely, that the construction of the terms of a contract is primarily for an arbitrator to decide, unless the arbitrator construes the contract in a manner that no fair-minded or reasonable person would; in short, that the arbitrator's view is not even a possible view to take. Also, if the arbitrator wanders outside the contract and deals with matters not allotted to him, he commits an error of jurisdiction. This ground of challenge will now fall within the new ground added under Section 34(2-A).*

***26. (2021) 0 AIR (SC) 4661 – PSA Sical Terminals Pvt. Ltd. vs. Board of Trustees of V.O. Chidambranar Port Trust Tuticorin***

माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में यह मत व्यक्त किया है कि–

*A decision which is perverse, though would not be a ground for challenge under "public policy of India" would certainly amount to a patent illegality appearing on the face of the award. However, a finding based on no evidence at all or an award which ignores vital evidence in arriving at its decision would be perverse and liable to be set aside on the ground of patent illegality.*

*To understand the test of perversity, it will also be appropriate to refer to paragraph 31 and 32 from the judgment of this Court in Associate Builders (supra), which read thus:*

*"31. The third juristic principle is that a decision which is perverse or so irrational that no reasonable person would have arrived at the same is important and requires some degree of explanation. It is settled law that where:*

*(i) a finding is based on no evidence.*

*(ii) an Arbitral Tribunal takes into account something irrelevant to the decision which it arrives at.*

*(iii) ignores vital evidence in arriving at its decision, such decision would necessarily be perverse.3*

*32. A good working test of perversity is contained in two judgments. In Excise and Taxation Officer-cum-Assessing Authority vs. Gopi Nath and Sons, 1992 Supp (2) SCC 312, it was held:*

*(SCC p. 317, Para 7)*

*"7......It is, no doubt, true that if a finding of fact is arrived at by ignoring or excluding relevant material or by taking into consideration irrelevant material or if the finding so outrageously defies logic as to suffer from the vice of irrationality incurring the blame of being perverse, then, the finding is rendered infirm in law."*

*In Kuldeep Singh vs. Commissioner of Police, (1999) 2 SCC 10 : 1999 SCC (L&S) 429, it was held: (SCC p. 14, Para 10)*

*"10. A broad distinction has, therefore, to be maintained between the decisions which are perverse and those which are not. If a decision is arrived at on no evidence or evidence which is thoroughly unreliable and*

*no reasonable person would act upon it, the order would be perverse. But if there is some evidence on record which is acceptable and which could be relied upon, howsoever compendious it may be, the conclusions would not be treated as perverse and the findings would not be interfered with."*

***27. (2022) 1 SCC 131 - Delhi Airport Metro Express (P) Ltd. v. DMRC***

माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में यह मत व्यक्त किया है कि—

*"Patent illegality should be illegality which goes to the root of the matter. In other words, every error of law committed by the Arbitral Tribunal would not fall within the expression "patent illegality". Likewise, erroneous application of law cannot be categorised as patent illegality. In addition, contravention of law not linked to public policy or public interest is beyond the scope of the expression "patent illegality". What is prohibited is for Courts to reappreciate evidence to conclude that the award suffers from patent illegality appearing on the face of the award, as Courts do not sit in appeal against the arbitral award. The permissible grounds for interference*

*with a domestic award under Section 34(2-A) on the ground of patent illegality is when the arbitrator takes a view which is not even a possible one, or interprets a clause in the contract in such a manner which no fair-minded or reasonable person would, or if the arbitrator commits an error of jurisdiction by wandering outside the contract and dealing with matters not allotted to them. An arbitral award stating no reasons for its findings would make itself susceptible to challenge on this account. The conclusions of the arbitrator which are based on no evidence or have been arrived at by ignoring vital evidence are perverse and can be set aside on the ground of patent illegality. Also, consideration of documents which are not supplied to the other party is a facet of perversity falling within the expression "patent illegality".*

*In Ssangyong, this Court held that the meaning of the expression "fundamental policy of Indian law" would be in accordance with the understanding of this Court in Renusagar Power Co. Ltd. v. General Electric Co.. In Renusagar, this Court observed that violation of the Foreign Exchange Regulation Act, 1973, a statute enacted for the "national economic interest", and disregarding the*

*superior Courts in India would be antithetical to the fundamental policy of Indian law. Contravention of a statute not linked to public policy or public interest cannot be a ground to set at naught an arbitral award as being discordant with the fundamental policy of Indian law and neither can it be brought within the confines of "patent illegality" as discussed above. In other words, contravention of a statute only if it is linked to public policy or public interest is cause for setting aside the award as being at odds with the fundamental policy of Indian law. If an arbitral award shocks the conscience of the court, it can be set aside as being in conflict with the most basic notions of justice. माननीय न्यायालय ने मत व्यक्त किया कि इस संदर्भ में नैतिकता के आधारों को सम्मिलित करने वाले घटकों से पंचाट को अपने परास में लेने वाले घटक निर्वचित किये गये हैं जिसमें यौन नैतिकता, जैसे कि गणिकावृत्ति शामिल है। अन्य घटक भी जो अवैद्य तो नहीं है परन्तु जिनको विधिनुसार प्रवर्तित नहीं करवाया जा सकता है।*

***28. (2020) 7 SCC 167 - Patel Engg. Ltd. v. North Eastern Electric Power Corpn. Ltd.***

माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में यह मत व्यक्त किया है कि–

*"Even though the High Court in para 44 of the judgment referred to various judgments, including Western Geco [which is now no longer good law], the case has been decided on the ground that the arbitral award is a perverse award and on a holistic reading of all the terms and conditions of the contract, the view taken by the arbitrator is not even a possible view. The High Court has rightly followed the test set out in para 42.3 of Associate Builders, which was reiterated in para 40 of Ssangyong Engg.*

*In our view, while dealing with the appeal under Section 37 of the Act, the High Court has considered the matter at length, and held that while interpreting the terms of the contract, no reasonable person could have arrived at a different conclusion and that the awards passed by the arbitrator suffer from the vice of irrationality and perversity.*

***29. (2022) 2 SCC 275 - State of Chhattisgarh v. SAL Udyog (P) Ltd.***

माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में यह मत व्यक्त किया है कि–

*"Reliance placed by the learned counsel for the respondent Company on the ruling in Hindustan Construction Co. Ltd. is found to be misplaced. In the aforesaid case, the Court was required to examine whether in an appeal preferred under Section 37 of the 1996 Act against an order refusing to set aside an award, permission could be granted to amend the memo of appeal to raise additional/new grounds. Answering the said question, it was held that though an application for setting aside the arbitral award under Section 34 of the 1996 Act had to be moved within the time prescribed in the statute, it cannot be held that incorporation of additional grounds by way of amendment in the Section 34 petition would amount to filing a fresh application in all situations and circumstances, thereby barring any amendment, however material or relevant it may be for the consideration of a Court, after expiry of the prescribed period of limitation. माध्यस्थ्म एवं सुलह अधिनियम 1996 की धारा 34 (2) में अभिव्यक्ति ' न्यायालय पाता है कि ' का अभिप्राय व्यक्त करते हुये निर्धारित किया गया कि यदि मामले की परिस्थितियां अपेक्षित करें तो न्यायहित में धारा 34 के प्रार्थना पत्र में तरमीम अनुमेय है।*

10– अपनी मौखिक बहस को निष्कर्षित करते हुए विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता निगम ने विद्वान एकल पंच के आलौच्य पंचाट दिनांक 18.02.2015 व पश्चातवर्ती आदेश दिनांक 17.05.2015 को अपने वांछित अनुतोष के मुताबिक अपास्त किये जाने का निवेदन किया।

11– वरिष्ठ विद्वान अधिवक्ता श्री सुधांशु कासलीवाल व विदुषी अधिवक्ता सुश्री सुरूचि कासलीवाल द्वारा आलौच्य पंचाट की पोषणीय को चुनौती देते हुए बहस की गई। विद्वान अधिवक्तागण के द्वारा अपने आपत्ति प्रार्थना पत्रों, निगम की आपत्तियों में पेश किये गये अपने जवाब की मौखिक बहस में पुनरावृत्ति की। उन्होंने निवेदन किया है कि विद्वान एकल पंच आलौच्य अवार्ड पक्षकारान के विद्वान एकल पंच के सम्मुख पेश किये गये अभिवचनों एवं दस्तावेजों की अनदेखी कर विधि के सुस्थापित सिद्धान्तों के विपरीत पारित किया गया है। आलौच्य अवार्ड भारत की लोक नीति के खिलाफ है। विद्वान एकल पंच के द्वारा माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम का उल्लंघन करके आलौच्य अवार्ड पारित किया है। विद्वान एकल पंच के द्वारा अवार्ड को पारित करते समय महत्वपूर्ण विवाद्यकों को अनुतरित छोड दिया गया है। सीमेन्ट कम्पनियों की ओर से निवेदन रहा है कि विवाद्यक संख्या 3,4,5 व 8 के विवाद्यकों पर कारण सहित आदेश पारित नहीं किये गये है। विद्वान एकल पंच के द्वारा माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम की धारा 31(3) का अतिलंघन किया गया है। विद्वान एकल पंच के द्वारा सम्पत्ति के हस्तांतरण अधिनियम 1881 के पंजीयन एवं मुद्रांक अधिनियम की पालना सुनिश्चित नहीं करके कानूनी भूल की है। विद्वान एकल पंच ने सीमेन्ट कम्पनियों की अनुबंध के मुताबिक प्रास्थिति को वैधानिक रूप से निर्धारित नहीं किया गया है। सीमेन्ट कम्पनियों की स्थिति सुखाधिकार अधिनियम 1882 की धारा 60 बी

के प्रावधानों के तहत अपरिवर्तनीय अनुज्ञप्ति धारी हो गई थी परन्तु विद्वान एकल पंच द्वारा ऐसा नहीं माना गया है। विद्वान एकल पंच के द्वारा फ्लाई ऐश हेतु 245/– रूपये प्रति मेट्रिक टन प्रतिफल निर्धारित गलत रूप से किया गया है। इसकी सही दर 160/– रूपये प्रति मेट्रिक टन उनके द्वारा निर्धारित की जानी चाहिए थी। निगम के द्वारा अपने अनुबंध के मुताबिक 25 वर्षों तक निःशुल्क फ्लाई ऐश की आपूर्ति सीमेन्ट कम्पनी को की जानी चाहिए थी। विद्वान एकल पंच के द्वारा अधिसूचना दिनांकित 03.11.2009 को वर्ष 2004 के अनुबंध पर लागू मानकर विधिक गलती की है। विद्वान एकल पंच के द्वारा अपने अवार्ड में 9 प्रतिशत की राशि से ब्याज दिलवाने का आदेश भी गलत आधारों पर दिया है। सीमेन्ट कम्पनियों के द्वारा स्वयं ऐश हैण्डलिंग सिस्टम पर अपना काफी खर्चा किया गया है जो राशि करोड़ों में है, ऐसी स्थिति में निगम फ्लाई ऐश के पेटे कोई राशि प्राप्त करने का अधिकारी नहीं है। विद्वान एकल पंच के द्वारा अनुबंध को समझने में भूल की गई है। अनुबंध की शर्त संख्या 2.14 व अपेंडिक्स ए की धारा 8 का विद्वान एकल पंच द्वारा सही रूप से अर्थान्वयन नहीं किया गया है। आलौच्य अवार्ड दिनांकित 18.02.2015 आंशिक रूप से अविधिमान्य व मनमाना है। इस आवार्ड में सीमेन्ट कम्पनियों के द्वारा किये गये खर्चे, लागत व सीमेन्ट कम्पनियों को होने वाली आर्थिक हानियों पर सही ढंग से विचार नहीं किया गया है। निगम के द्वारा अवैध व मनमाने रूप से सीमेन्ट कम्पनियों को अपने परिसर से बेदखल करने की कार्यवाही का समारंभन किया गया जिसके लिए सीमेन्ट कम्पनियों ने विधि का सहारा लेकर न्यायालय के मार्फत अपने विरूद्ध उठाये जाने वाले प्रतिकूल कृत्यों को रूकवाया है। ऐसी स्थिति में सीमेन्ट कम्पनियों स्वयं निगम से क्षतिपूर्ति प्राप्त करने की अधिकारी थी। विद्वान एकल पंच

के द्वारा इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया। विद्वान एकल पंच का यह निष्कर्ष कि सीमेन्ट कम्पनियों ने अपने लागत को पूर्व में वसूल कर लिया, सही नहीं है। विद्वान एकल पंच के द्वारा अनुबंध की शर्तो से बाहर जाकर आलौच्य अवार्ड पारित किया है। विद्वान एकल पंच के द्वारा उनके समक्ष दिनांक 17.03.2015 को उनके समक्ष अतिरिक्त अवार्ड पारित करने के लिए पेश किये गये आवेदन को गलत व मनमाने आधारों पर अस्वीकार किया गया है। उनके द्वारा मूल आलौच्य अवार्ड दिनांक 18.02.2015 में विवाद्यक संख्या 6, 9 व 10 के बारे में विस्तृत व कारण सहित अवार्ड पारित नहीं किया गया है। विद्वान अधिवक्ता सीमेन्ट कम्पनी के द्वारा अपने तर्कों के समर्थन में निम्नलिखित न्यायिक दृष्टांत पेश किये गयेः–

1- Sathyanath & Anr. Vs Sarojamani 2022 SSC Online Sc 563

इस नजीर में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि

> *"Keeping in view the object of substitution of sub-Rule (2) to avoid the possibility of remanding back the matter after the decision on the preliminary issues, it is mandated for the trial court under Order XIV Rules 24 and 25 to record findings on all the issues.*

सर्वोच्च न्यायालय ने निर्धारित किया कि आदेश 14 नियम 2 के प्रतिस्थापन का उद्देश्य प्राथमिक विवाद्यकों के निर्णय के बाद मामले को प्रतिप्रेषण हेतु भेजने की संभावना को टालना था। यह सभी विचारण न्यायालयों के लिए आज्ञापक है कि वह आदेश 14 नियम 2 मे

व प्रथम अपीलीय न्यायालय आदेश 20 नियम 5 के अनुसरण में आदेश 41 नियम 24 व 25 के निबंधनोनुसार सभी विवाद्यकों पर अपना निष्कर्ष अभिलिखित करें।

**2- Union Territory of Pondicherry and Other Vs P.V. Suresh And other (1994) 2 SCC 70**

इस नजीर में माननीय उच्चतम न्यायालय ने एक सीमित प्रश्न पर यह मत व्यक्त किया है कि जहां अनुबंध का इस तरह अर्थान्वयन किया गया कि जो हानि थी वह आनुवांशिक थी और इस में समाहित थी, यदि ऐसा है तो इसे बदला जाना चाहिए अन्यथा ये न्यायालय का क्षेत्राकार नहीं है व पक्षकारों के बीच हुए अनुबंध के निबंधनों को बदले अथवा पुनःलिखित करें।

**3- Polymat India (P) Ltd. Vs National Insurance Co. Ltd (2005) 9 SSC 174**

इस नजीर में धारा 37 माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम पर विचार करते हुए अनुबंध के अर्थान्वयन के संबंध में निर्धारित किया गया। यह न्यायालय का कर्तव्य है कि वह संविदा के दस्तावेज का इस भांति निर्वचन करे जैसा कि पक्षकारान के बीच में समझा गया था। यह निर्वचन कडाई से बिना संविदा की प्रकृति के बदले होना चाहिए। संदर्भ से बाहर कोई निर्वचन नहीं किया जा सकता है। बीमा के अनुबंध का निर्वचन करते वक्त न्यायालय को पक्षकारों के द्वारा

अभिव्यक्त शब्दों को निर्वचित करना चाहिए। न्यायालय को कोई नवीन संविदा का निर्माण नहीं करना चाहिए यदि पक्षकारान के द्वारा स्वयं ऐसा नहीं किया गया है इसलिए संविदा का निर्वचन कडाई से बिना संविदा की प्रकृति को बदले किया जाना चाहिए भले ही यह पक्षकारान के हितों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करे। हस्तगत नजीर में अपीलार्थी की अपील को अस्वीकार किया गया।

**4-** Reliance Energy Ltd Vs Maharastra State Road Development Corporation Ltd. (2007) 8 SSC 1

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में व्यक्त किया कि –

*36. We find merit in this civil appeal. Standards applied by courts in judicial review must be justified by constitutional principles which govern the proper exercise of public power in a democracy. Article 14 of the Constitution embodies the principle of "non-discrimination". However, it is not a free-standing provision. It has to be read in conjunction with rights conferred by other articles like Article 21 of the Constitution. The said Article 21 refers to "right to life". It includes "opportunity". In our view, as held in the latest judgment of the Constitution Bench of nine Judges in I.R. Coelho v. State of T.N.3, Articles 21/14 are the heart of the chapter on fundamental rights. They cover various aspects of life. "Level playing field" is an important concept while construing Article 19(1)(g) of the Constitution. It is this doctrine which is invoked by REL/HDEC in the present case. When Article 19(1)(g) confers fundamental right to carry on business*

*to a company, it is entitled to invoke the said doctrine of "level playing field". We may clarify that this doctrine is, however, subject to public interest. In the world of globalisation, competition is an important factor to be in mind. The doctrine of "level playing field" is an important doctrine which is embodied in Article 19(1)(g) of the Constitution. This is because the said doctrine provides space within which equally placed competitors are allowed to bid so as to subserve the larger public interest. "Globalisation", in essence, is liberalisation of trade. Today India has dismantled licence raj. The economic reforms introduced after 1992 have brought in the concept of "globalisation". Decisions or acts which result in unequal and discriminatory treatment, would violate the doctrine of "level playing field" embodied in Article 19(1)(g). Time has come, therefore, to say that Article 14 which refers to the principle of "equality" should not be read as a stand alone item but it should be read in conjunction with Article 21 which embodies several aspects of life. There is one more aspect which needs to be mentioned in the matter of implementation of the aforestated doctrine of "level playing field". According to Lord Goldsmith, commitment to the "rule of law" is the heart of parliamentary democracy. One of the important elements of the "rule of law" is legal certainty. Article 14 applies to government policies and if the policy or act of the Government, even in contractual matters, fails to satisfy the test of "reasonableness", then such an act or decision would be unconstitutional.*

माननीय न्यायालय की इस नजीर में 'क्रीडा स्थल के स्तर'

पर मत व्यक्त करते हुए निर्धारित किया कि संविधान का अनुच्छेद 19 (1)(जी) किसी कम्पनी को व्यापार करने का मौलिक अधिकार प्रदत्त करता है। ऐसी स्थिति में कम्पनी क्रीडा स्थल के स्तर के सिद्धान्त का आह्वान करने की अधिकारिणी है। यह लोकहित का विषय है। वैश्वीकरण सार में व्यापार का उदारीकरण है। अनुच्छेद 14 में वर्णित समानता को अकेले नहीं पढ़ा जाना चाहिए। इसे अनुच्छेद 21 के साथ जोडकर पढा जाना चाहिए। गोल्ड स्मिथ के मुताबिक विधि के शासन के प्रतिबद्धता संसदीय जम्हूरियत का हृदय है। विधि के शासन का एक महत्वपूर्ण घटक विधिक निश्चितता है। अनुच्छेद 14 सरकार की नीतियों / कार्यों और यहां तक संविधात्मक मामलों पर लागू होता है। यदि यह युक्तियुक्तता के परीक्षण को सुंतष्ठ करने में असफल रहते है तो ऐसा कार्य अथवा निर्णय असंवेधानिक होगा। इस प्रकरण में अपीलार्थी की अपील को स्वीकार किया गया था।

5- Ram Sarup Gupta (Dead) by LRs Vs Bishun Narain Inter College and Others (1987) 2 SSC 555

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस न्यायिक दृष्टांत में व्यक्त किया कि —

> *9. Licence as defined by Section 52 of the Act means grant of permission, by a person to the other, a right to do or continue to do, in or upon, the immovable property of the grantor, something which would, in the absence of such right, be unlawful. Such right does not amount*

*to an easement or any interest in the property. The rights so conferred is licence. The grant of licence may be express or implied which can be inferred from the conduct of the grantor. Section 60 provides that a licence may be revoked by the grantor unless: (a) it is coupled with a transfer of property and such transfer is in force; (b) the licensce, acting upon the licence, has executed a work of permanent character and incurred expenses in the execution. Revocation of licence may be express or implied. Section 62 enumerates circumstances on the existence of which the licence is deemed to be revoked. One of such conditions contemplates that where licence is granted for a specific purpose and the purpose is attained, or abandoned, or if it becomes impracticable, the licence shall be deemed to be revoked. Sections 63 and 64 deal with licensee's right on revocation of the licence to have a reasonable time to leave the property and remove the goods which he may have placed on the property and the licensee is further entitled to compensation if the licence was granted for consideration and the licence was terminated without any fault of his own. These provisions indicate that a licence is revocable at the will of the grantor and the revocation may be expressed or implied. Section 60 enumerates the conditions under which a licence is irrevocable. Firstly, the licence is irrevocable if it is coupled with transfer of property and such right is enforced and secondly, if the licensee acting upon the licence executes work of permanent character and incurs expenses in execution. Section 60 is*

*not exhaustive. There may be a case where the grantor of the licence may enter into agreement with the licensee making the licence irrevocable, even though, neither of the two clauses as specified under Section 60 are fulfilled. Similarly, even if the two clauses of Section 60 are fulfilled to render the licence irrevocable yet it may not be so if the parties agree to the contrary. In Muhammad Ziaul Haque v. Standard Vacuum Oil Co., the Calcutta High Court held that where a licence is prima facie irrevocable either because it is coupled with a grant or interest or because the licensee erected the work of permanent nature there is nothing to prevent the parties from agreeing expressly or by necessary implication that licence nevertheless shall be revocable. On the same reasoning there is nothing to prevent the parties agreeing expressly or impliedly that the licence which may not prima facie fall within either of the two categories of licence (as contemplated by Section 60) should nevertheless be irrevocable. The same view was taken by Das, J. (as he then was) in Dominion of India v. Sohan Lal. Bombay High Court has also taken the same view in M. F. De Souza v. Childrens Education Uplift Society". The parties may agree expressly or impliedly that a licence which is prima facic revocable not falling within either of the two categories of licence as contemplated by Section 60 of the Act shall be irrevocable. Such agreement may be in writing or otherwise and its terms or conditions may be express or implied. A licence may be oral also in that case, terms, conditions and the nature of the licence, can be gathered*

*from the purpose for which the licence is granted coupled with the conduct of the parties and the circumstances which may have led to the grant of the licence.*

*15.In view of the above discussion we are of the opinion that the pleadings, evidence and the circumstances available on record, have fully established that Raja ram kumar bhargava had granted licence to the school in respect of the building and the land attached to it for the purpose of imparting education and the school in furtherance of that purpose constructed additional buildings and it further incurred expenses in carrying out modification and extensive repairs in the existing buildings during the period, RajaRam Kumar Bhargava continued to be the President of the managing committee of the school. He Never raised any objection to it and there is nothing on record to show that licensor had retained right to revoke the licence. If a person allows another to build on his land in furtherance of the purpose for which he had granted licence, subject to any agreement to the countrary (sic he) cannot turn round, later on, to revoke the licence. This principle is codified in section 60(b) of the Act. Moreover, conduct of the parties has been such that quity will presume the existence of a condition of the licence by plain implication to show that licence was perpetual and irrevocable. That being so, Raja Ram Kumar Bhargava could not revoke the licence or evict the school and the appellant being transferee from him could not and did not acquire any better right. The appellant therefore has no*

> *right to revoke the licence or to evict the school, so long the school continues to carry on the purpose for which the licence was granted. The trial court and the High Court have therefore rightly dismissed the suit.*

इस न्यायिक दृष्टांत में माननीय उच्चतम न्यायालय ने अपीलार्थी की अपील को अस्वीकार करते हुए सुखाधिकार अधिनियम 1882 में प्रावधानित अनुज्ञप्ति की व्याख्या की है। धारा 52 में अनुज्ञप्ति को परिभाषित किया गया है। अनुज्ञप्ति एक अचल सम्पत्ति में और पर एक व्यक्ति द्वारा अन्य व्यक्ति को किसी कार्य को करने का अधिकार देना या सतत् रूप से करने देना ऐसे अधिकार के अभाव में किया गया कार्य अवैध होता है। ऐसा अधिकार सुखाधिकार अथवा सम्पत्ति में किसी हित की कोटि में नहीं आता है। इस तरह से जो अधिकार प्रदत्त किये जाते है उसे अनुज्ञप्ति कहा जाता है। अनुज्ञप्ति का प्रदान किया जाना अभिव्यक्त या विवंक्षित हो सकता है। जो कि प्रदाता के आचरण के द्वारा अनुमानित किया जाता है। धारा 60 सुखाधिकार अधिनियम यह प्रावधानित करती है कि प्रदाता के द्वारा अनुज्ञप्ति का खण्डन किया जा सकता है। इन दो स्थितियों में अनुज्ञप्ति का खण्डन नहीं किया जा सकता हैः– 1– जब यह सम्पत्ति के अंतरण के साथ युग्मित हो और सम्पत्ति का अंतरण प्रभाव में हो। 2– अनुज्ञप्ति धारी अनुज्ञप्ति पर कार्य करते हुए एक स्थायी चरित्र के कार्य का नि पादन कर दिया हो और इस निष्पादन में खर्चा उसके व्यय पर हुआ हो। धारा 62 उन परिस्थितियों को

प्रावधानित करती है जिनके अस्तित्व में होने पर अनुज्ञप्ति को खण्डित माना जा सकेगा। जहां अनुज्ञप्ति विनिर्दिष्ट किसी मकसद के लिए प्रदान की जाती है और जब वह मकसद पूरा हो जाये या परित्यक्त हो जाये या वह अव्यवहारिक हो जाये उस स्थिति में अनुज्ञप्ति खण्डित मानी जा सकेगी। धारा 63 व 64 इस बारे में प्रावधानित करती है कि अनुज्ञप्ति धारी को सम्पत्ति को छोडने और वहां से अपनी वस्तुओं को जो अनुज्ञप्त सम्पत्ति पर रखी है, को हटाने के लिए एक युक्तियुक्त समय रखेगा व अनुज्ञप्ति धारी उन परिस्थितियों पर प्रतिकर प्राप्त करने का भी अधिकारी होगा जहां अनुज्ञप्ति को प्रतिफल के पेटै प्रदत्त किया गया है और जहां अनुज्ञप्ति धारी ने कोई व्यतिक्रम कारित नहीं किया है। यह प्रावधान दर्शित करते है कि एक अनुज्ञप्ति प्रदाता की इच्छा पर खण्डनीय होती है और खण्डन अभिव्यक्त अथवा विवंक्षित हो सकता है। धारा 60 उन परिस्थितियों को वर्णित करती है जब एक अनुज्ञप्ति को खण्डित किया जा सकता है। अनुज्ञप्ति मौखिक भी हो सकती है। अनुज्ञप्ति की शर्तें और प्रकृति का आकलन उस उद्देश्य के द्वारा जिसके लिए अनुज्ञप्ति प्रदान की गई है जो पक्षकारान के आचरण से युग्मित है और उन परिस्थतियों से जिनके द्वारा अनुज्ञप्ति प्रदान की गई है,, से निष्कर्षित किया जा सकता है। न्यायालय के मत में इस तथ्य को सही ठहराया गया कि जहां अनुज्ञप्ति एक विद्यालय को चलाने के लिए दी गई और अनुज्ञप्ति को खण्डन करने का कोई

अधिकार आरक्षित रखा गया  तथा जहां अनुज्ञप्ति धारी ने स्थायी प्रकृति का निर्माण खडा कर लिया उन परिस्थितियों में वह अनुज्ञप्ति का प्रदाता भूमि को प्राप्त करने का अधिकारी नहीं है। काम का निष्पादन विद्यालय के मकसद के लिए किया गया और यह 'अनुज्ञप्ति पर कार्य करना' अभिव्यक्ति की परिधि में आता है।

**6-** State of Punjab Vs Nestle India ltd. & Anr. (2004) 6 SCC 465

इस न्यायिक दृष्टांत में प्रार्थी की अपील को अस्वीकार किया गया था। इस न्यायिक नजीर में प्रोमेजरी विबंध को विवेचित किया गया है। इसमें इस मत के पालन की सुज्ञात पूर्ववर्ती शर्तों का जिक्र किया गया है जो कि पहला– एक स्पष्ट और सुबोध वचन यह जानते हुए या यह आशय रखते हुए किया जाना कि इस पर वचनग्रहिता द्वारा कार्य किया जायेगा। दूसरा – वचनग्रहिता द्वारा इस वचन पर इस तरह से कार्य किया जाना कि यदि वचनदाता को अपने वचन से पलटने दिया गया तो यह असाम्यिक होगा। यह मत वहां लागू किया जायेगा जहां वचन एक विधिक अधिकार के सृजिन हेतु आश्रित था या एक विधिक नातेदारी को जो भविष्य में उत्पन्न होनी है, को प्रभावित करता है। सरकार को इस मत के आरोपन के लिए समान रूप से दायी माना गया चाहे संविदात्मक, प्रशासनिक अथवा अधिनियमति के क्षेत्र में कोई वचन दिया गया हो।

**7- Food Corporation of India Vs Kamdhenu Cattle Feed Industries (1993) 1 SSC 71**

इस न्यायिक दृष्टांत में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील को स्वीकार किया गया है। इसमें मत व्यक्त किया गया कि संविदात्मक परिधि में राज्य एवं इसकी साधिकाओं को अनुच्छेद 14 का पालन करना चाहिए। लोक विधि में कोई निर्बाध विवेकाधिकार नहीं हो सकता है। लोक प्राधिकारियों को लोक हित में इसका इस्तेमाल करना होता है। यह राज्यों पर ऋजुता से कार्य करने का दायित्व अधिरोपित करता है और उनसे वांछा करता है कि वह कार्यों में ऋजुता की प्रक्रिया का अनुसरण करें। कोई भी निर्णय मनमाना और अविधिपूर्ण नहीं हो सकता है। वैधानिक प्रत्याशा का सिद्धान्त विधि के शासन के द्वारा अंगीकृत किया गया है और हमारे विधिक तंत्र में इस तरह से और इस विस्तार तक लागू है।

**8- Bharat Sanchar Nigam Ltd. Vs BPL Mobile Cellular Ltd & Ors. 2008 (13) SSC 597**

इस न्यायिक दृष्टांत में माननीय उच्चतम न्यायालय ने मत व्यक्त किया है कि परिपत्र अपने आप में प्रभाव में नहीं लाया जा सकते जब तक कि वे संविदा का भाग नहीं बन जाते। जब अनुबंध का निर्माण मतैक्य से हुआ हो वहां दरों में एकल रूप से बदलाव नहीं किया जा सकता। संविदा में कोई भी नवीयन उसी भांति होना चाहिए जिस तरह संविदा में प्रवेश के समय होता है। हस्तगत अपील

को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अस्वीकार किया गया है।

8A- Essar Procurement Services Ltd. Vs Paramount constructions MANU/MH/2511/2016

इस न्यायिक नजीर में माननीय न्यायालय द्वारा मत व्यक्त किया गया कि जहां याची के द्वारा गलत तरीके से अनुबंध को समाप्त किया जाता है वहां याची का प्रतिदावा स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए था। आलौच्य माध्यस्थ पंचाट जिसके द्वारा प्रत्यर्थी का दावा स्वीकार किया गया था, को अपास्त किया गया।

9- State of Goa Vs Praveen Enterprises (2012) 12 SCC 581

इस न्यायिक नजीर में माननीय उच्चतम न्यायालय के विचार के लिए प्रश्न उत्पन्न हुआ कि क्या निम्न परिस्थितियों में माध्यस्थम कार्यवाहीयों के प्रत्यर्थी प्रतिदावा पेश करने के लिए परविरत हैः—

> *(a) It had served a notice upon the claimant requesting that the disputes relating to that counterclaim be referred to arbitration and the claimant had concurred in referring the counterclaim to the same arbitrator: and/or*
>
> *(b) It had set out the said counterclaim in its reply statement to the application under Section 11 of the Act and the Chief Justice or his designate*

*refers such counterclaim also to arbitration.*

जब धारा 23 को धारा 2 (9) के साथ पढ़ा जाता है तब यह स्पष्ट होता है कि प्रत्यर्थी प्रतिदावा पेश करने का अधिकारी है जब तक की पक्षकारान के मध्य अन्यथा करारित ना हो। साथ ही प्रतिदावा जोडा जाना और तरमीम भी शामिल है जब तक कि अन्यथा करारित ना हो। माननीय उच्चतम न्यायाल द्वारा उक्त अपील को स्वीकार किया गया है।

**10- Voltas Limited Vs Rolta India Ltd (2014) 4 SCC 516**

इस न्यायिक नजीर में माननीय उच्चतम न्यायालय ने स्टेट ऑफ गोआ बनाम प्रवीण एन्टरप्राइजेज का हवाला देते हुये मत व्यक्त किया है कि :—

*Thereafter addressing the issue pertaining to counterclaim, the court observed as follow: (praveen Enterprises case, SSC pp. 590-91, para 20) "As far as counterclaims are concerned, there is not room for ambiguity in regard to the relevant date for determining the limitation. Section 3(2)(b) of the Limitation Act, 1963 provides that in regard to a counterclaim in suits, the date on which the counterclaim is made in court shall be deemed to be the date of institution of the counterclaim. As the Limitation Act, 1963 is made applicable to*

*arbitration, in the case of which the counterclaim is made before the arbitrator will be the date on which the counterclaim is made before the arbitrator will be the date of 'Institution' insofar as counterclaim is concerned. There is, therefore, no need to provide a date of 'commencement' as in the case of claims of a claimant. Section 21 of the Act is therefore not relevant for counterclaims. There is however one exception. Where the respondent against whom a claim is made, had also made a claim against the claimant and sought arbitration by serving a notice to the claimant but subsequently raises that claim as a counterclaim in the arbitration proceedings initiated by the claimant, instead of filling a separate application under section 11 of the Act, the limitation for such counterclaim should be computed, as on the date of service of notice of such claimon the claimant and not on the date of filing of the counterclaim.* हस्तगत प्रकरण में अपील आंशिक रूप से स्वीकार की गई।

**11-** Bharat Petroleum corporation Limited Vs Go Airlines (India) Ltd (2019) 10 SCC 250

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस न्यायिक नजीर में यह मत व्यक्त किया है कि – *The Questions whether the issue regarding CENVAT invoices was outside the terms of agreement or wheather CENVAT invoices*

*relates to the agreement dated 01-01-2007 and 01-04-2009 and whether it is arbitrable and whether it falls beyond the scope of reference to arbitration and such other related questions, are to be determined only during the enquity, It may be that after enquiry, the arbitrator might reject the counterclaim for CENVAT invoices as not arbitrable and the counterclaim beyond the scope of reference to arbitration. But to reject the counterclaim at the threshold on the ground that the arbitrator has no jurisdiction would not be proper. The High court, in our view, has rightly set aside the order of the Learned arbitrator dated 18-04-2011.* माननीय बोम्बे उच्च न्यायालय के आलौच्य आदेश को इस अपील में अपास्त किया गया है।

**12-** Competent Authority Vs Barangore Jute Factory & Ors. **(2005) 13 SCC 477**

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस न्यायिक नजीर में यह मत व्यक्त किया है कि यह स्थापित विधि है कि जहां एक अधिनियमिति यह अपेक्षा करती है कि एक विशिष्ठ कार्य एक विशिष्ठ तरीके से ही किया जाना चाहिए, तब वह कार्य केवल उसी प्रकार से किया जाना चाहिए। अधिनियमिति के हर शब्द को इसके सम्यक अर्थ दिया जाना चाहिए। हमारे विचार में आलौच्य अधिसूचना

वैधानिक आज्ञा से मेल खाने में असमर्थ रही है। यह अस्पष्ट है। इसमें आलौच्य अधिसूचना को विधि के अनुसार नहीं माना गया।

हस्तगत प्रकरणों में वर्ष 2009 की अधिसूचना को विधि के न्यायालय में चुनौती दी गई हो ऐसा सीमेन्ट कम्पनीयों का कोई मामला नहीं है।

**13-** Nusli Nevile Wadia Vs Ivory Properties and Ots (2020) 6 SCC 557 and

**14-** Harshad chiman lal Modi Vs DLF Universal Ltd & Anr. (2005) 7 SCC 791

इन मामलों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि क्षेत्राधिकार के बिना पारित किया गया निर्णय व्यर्थ है।

**14A-** Shri Saurav Jain & Anr Vs M/s A.B.P. Design & Anr. Civil Appeal No. 4448/2021

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस न्यायिक नजीर में यह मत व्यक्त किया है कि विधि के वे विशद प्रश्न जो मामले के क्षेत्राधिकार की मूल तक जाते है, वे प्रथम बार संविधान के अनुच्छेद 136 की विशेष अनुमति याचिका में कभी भी उठाये जा सकते है। इस मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने अपील को स्वीकार करते हुए उच्च न्यायालय के आलौच्य आदेश को अपास्त किया है।

**14B-** State of Orissa Vs Mamata Mohanty (2011) 3 SCC

436

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस न्यायिक नजीर में यह मत व्यक्त किया है कि यह न्यायालय के लिए बाध्यकर है कि वे ऐसे वाद की अपील को खारिज कर दे यदि वे मियाद की विहित अवधि से परे पेश किये गये हो। भले ही मियाद के बिन्दु को विपक्षी ने नहीं उठाया गया हो।

15- Pyare Mohan lal Vs State of Jharkhand & Ors. (2010) 10 SCC 693 and

16- Rajendra Tiwary Vs Basudeo Prasad & Anr. (2002) 1 SCC 90

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इन न्यायिक नजीरों में यह मत व्यक्त किया है कि ऐसा अनुतोष जिसका दावा नहीं किया गया हो, प्रदत्त नहीं किया जा सकता है।

17- Nasiruddin & Ors. Vs Sita Ram Agarwal (2003)2 SCC 577

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस न्यायिक नजीर में यह मत व्यक्त किया है कि अनुतोष के क्षेत्र को अभिवृद्धित नहीं किया जा सकता है।

18- hindustan Construction Company Limited & Anr. Vs UOI & Ors. (2020) 17 SCC 324

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस न्यायिक नजीर में यह मत व्यक्त किया है कि माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम की धारा 87 को संवैधानिक कसौटी पर खरा न उतरने के कारण Struck Down किया गया।

**19- Project Director, National Highways No. 45 E & 220 National Highways Authority of India Vs M. Hakeem & Anr. (2021) 9 SCC 1**

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस न्यायिक नजीर में यह मत व्यक्त किया है कि न्यायालय धारा 34 की शक्तियों का प्रयोग करते हुए माध्यस्थम पंचाट को उपान्तरित नहीं कर सकता है।''

12– एसीसी सीमेन्ट कंपनी के विद्वान अधिवक्ता ने भी विदुषी अधिवक्ता सुरूचि कासलीवाल के तर्कों का समर्थन किया। सीमेन्ट कम्पनियों की मुख्य वांछा यह रही है कि उनके आपत्ति प्रार्थना पत्रों को स्वीकार फरमाया जाये और अनुचित, गलत अवैध व मनमाने आधारों पर पारित किये गये अवार्ड को अपास्त फरमाये जाने का निवेदन किया।

13– निगम के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री आर.के. अग्रवाल, सीमेन्ट कम्पनी की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री सुधांशु कासलीवाल, विदुषी अधिवक्ता सुरूचि कासलीवाल एवं एसीसी सीमेन्ट कम्पनी के विद्वान अधिवक्ता को सविस्तार सुना गया। तर्कों पर मनन किया गया। प्रस्तुत न्यायिक नजीरों एवं माध्यस्थम से संबंधित विधि का ससम्मान अनुशीलन किया गया।

14– प्रकरण में न्यायालय के समक्ष अवधार्य प्रश्न यह है कि राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड व पांचों सीमेन्ट कम्पनियों द्वारा आक्षेपित आधारों पर आलौच्य पंचाट दिनांक 18.02.2015 अपास्तनीय है अथवा नहीं एवम् विद्वान माध्यस्थम अधिकरण का फैसला दिनांक 17.05.2015 विधि अनुसार संधारणीय है अथवा नहीं? हस्तगत अवधार्य प्रश्न पर न्यायालय का सकारण निष्कर्ष निम्नलिखित है–

15– भारत सरकार के पर्यावरण व वन मंत्रालय की अधिसूचना 14.09.1999 के प्रभाव अनुसार निगम ने फ्लाई ऐश के प्रभावी व्ययन के लिए सीमेन्ट कम्पनियों से लिखित में अनुबंध किये जिनकी अनुबंध शर्तों में पर्याप्त सादृश्यता है। सीमेन्ट कम्पनियों के निवेदन मुताबिक निगम एवं अल्ट्राटेक सीमेन्ट लिमिटेड के मध्य हुए सहमति करार की कुछ शर्तें निम्न प्रकार हैः–

*2.2 KSTPS will provide the above land on lease to GIL for installing infrastructure facility on token lease money. The Lease of land shall be initially for a period of 5 years only which may be extended by RRVUNL. Ownership and other rights shall remain with KSTPS.*

*2.6 KSTPS will supply entire quantity of fly ash of ESP generated from Unit 4 and 5 to GIL barring unforeseen situations, annual shut down and routine break down maintenance. However, ten (10) percent quantity of fly ash shall be at the disposal of KSTPS for allotment of small entrepreneurs in near vicinity.*

*2.8 RRVUNL agrees to supply fly ash free of cost, initially for a period of 5 years and the same may be reviewed every year on the basis of performance of the firm (GIL) and then prevailing circumstances. The agrement shall finally be reviewed on fresh terms and conditions as agreed mutually for continuation beyond the period of 5 years.*

*2.11 In case GIL may not be able to take delivery fly ash from Units 4 and 5 for a period of more than a month of reasons other than unforeseen situations / routine break downs or any other conditions beyond the control of GIL, KSTPS will reserve the right to own the system. Similarly, under any other situation of non-fulfilment of Agreement on the part of GIL, the permission will be withdrawn and the installed system may be taken over by RRVUNL/KSTPS.*

*2.12 The system installed by GIL shall become sole property of KSTPS /RRVUNL on epxiry / termination of the agreement.*

*2.13 GIL agrees to pay Rs.12 Lakhs per annum to RRVUNL out of which Rs. 10.00 Lakhs will be reimbursement towards maintenance cost of the approach road from storage silo to Gate No.4 and Rs.2 Lakh for maintaining the cleanliness of the surrounding, where the transit silos and storage silos will be installed and the road used for the purpose.*

*2.14 The dry ash collection system to be installed by GIL will be generally in line with the proposal submitted by GIL, as annexed at Appendix-A, subject to technical feasibility and system requirements and the terms and conditions shall be in accordance to guidelines issued by KSTPS and accepted by GIL as annexed at Appendix-B.*

*5. PROJECT COMPLETION - GIL agrees to complete the above project and commission the same within a time period of 12 months from the date of signing the agreement. However, in case of any abnormal delay in obtaining clearances from various regulatory bodies for starting the project work, GIL will request KSTPS for extension of time and extension of time in such case shall be entirely at discretion of RRVUNL.*

*6. VALIDITY - This Agreement will be in force for a period of 5 years from the date of commissioning of the system or six years from the date of signing of the agreement, which ever is later.*

*9. SETTLEMENT OF DISPUTES ETC - In the event of any question, dispute or difference arising between the parties hereto touching the construction of any clause therein contained or the rights, duties and liabilities of the parties hereto or in any way touching or arising out of these presents, the same shall be referred for*

*determination by arbitrator to be appointed by the CMD, RRVUNL. Arbitration proceedings shall be in accordance with the provisions of the Indian Arbitrtaion Act, 1996 or any other amendment or modification thereof for the time being in force.*

*10. CONTINUNITY- Services under the Agreement notwithstanding the existence of any dispute, question of recovery, shall continue during the arbitration proceedings and no payuments due and payable by GIL or supply of fly ash by RRVUNL to GIL shall be withheld on account of such arbitration proceedings unless such payment or supply itself is the direct subject matter or one of the subject matters of arbitration.*

*Clause 8 of Appendix-A to the said Agreement dated 15.10.2004 reads as under:-*

| | | |
|---|---|---|
| *9(A)* | *The agreement between the firm & RVUN/KTPS shall be for 5 years initially.* | *Agreed.* |
| *(B)* | *The agreement shall be reviewed every year on the basis of performance of the firm.* | *Agreed.* |

16– भारत सरकार की 2009 की अधिसूचना के द्वारा फ्लाई ऐश के विक्रय को

अनुमत किया गया। इस अधिसूचना के प्रकाश में आने के बाद से निगम व सीमेन्ट कम्पनियों के मध्य परस्पर विवादों का समारंभन हुआ। माननीय राजस्थान उच्च न्यायालय में सीमेन्ट कम्पनियों के आवेदन पर धारा 11 माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम की शक्तियों के तत्वाधान विद्वान एकल पंच की नियुक्ति के आदेश हुए। विद्वान एकल पंच के द्वारा निगम व सीमेन्ट कम्पनियों के मध्य विवाद निस्तारण हेतु माध्यस्थम कार्यवाहियों का आगाज किया गया। विद्वान एकल पंच महोदय ने विवाद निस्तारण हेतु निम्न विवाद्यक विरचित कियेः—

*1- On what date the period of 5 years expired on the terms of clause 6 of the agreement ?*

*2- What is the effect of clauses 9(A) and 9(C) read with clause 2.8 of the agreement on the rights of the parties after the completion of the initial period of 5 years under the agreement ?*

*3- Whether the benefit of Clause 8 of Appendix-A to the agreement dated 15.10.2004 between M/s Ultratech Cement Limited (earlier known as Grasim Industries Limited) and the respondent- RRVUN can be taken by other Cement Companies and what is the effect of the said clause on the rights*

*and obligations of the parties?*

*4- Whether the Cement Companies are liable to pay price of fly ash lifted by them on the expiry of the initial period of 5 years or only after 14.03.2014 as the respondent never demanded any payments prior to such date and if so at what price?*

*5(a)- Whether the Cement Companies are entitled to lift fly ash even after the expiry of initial period of 5 years on the same terms and conditions as contained in the initial agreement and if so upto what period ?*

*5(b)- Whether the respondent is estopped by conduct and necessary implication from restricting the life of the agreement for a limited period of 5 years?*

*6. Whether the systems installed by the Cement Companies shall be the sole property of the respondent after the expiry of the termination of the agreement or still remain the property of the Cement Companies ?*

*7. What is the effect of Gazette Notification dated 14.09.1999 and it's subsequent amendments issued by the Government of India on the controversy in the present case?*

*8. Whether the respondent is entitled to claim any amount from the claimants for the wet disposal of fly ash during such time the claimants were unable to lift the same i.e. for the period 19.11.2013 to 14.03.2014 ?*

*9. Whether the transactions in question under the agreement was a lease relating to an immovable property and as such governed by the provisions of the Transfer of Property Act and the Registration Act ?*

*10. Even if lifting of dry fly ash be treated as a license, the installation of its Handling and Maintenance Systems of permanent nature, it became an irrevocable license and what is its effect in the present controversy ?*

*11. Whether the respondent is entitled to any counter claim and to what extent ?*

*12. Whether the respondent was entitled to issue the NIT dated 24.08.2011 even before the expiry of 5 years period initially fixed under the agreement ?*

*13. What is the effect of clause 2.8 of the agreement on the review of the agreement on fresh terms and conditions as agreed mutually for continuation beyond the period of 5 years, in the present controversy?*

*14. Relief?*

17– विद्वान एकल पंच के द्वारा दिनांक 18.02.2015 को आलोच्य पंचाट पारित किया गया। जिसका तात्विक एवं प्रभावी भाग अग्रलिखितानुसार हैः–

*It is also made clear that the respondent had exercised its option of claiming the price of fly ash under the notification dated 03.11.2009 by taking step of inviting tender, it had never agreed the claimants to lift fly ash free of cost after the completion of the ionitial period of the agreement. I find not force in the case of claimants that they were entitled to lift the fly ash free of cost even after the expiry of the initial term of 5 years, as*

*there was no demand of sale price made for fly ash lifted by the claimants, In my view when no rates were settled, no demand could have been made by the respondent for the price of the fly ash. However, making no demand in the above circumstances cannot mean that the respondent had given its claim or had consented to allow the claimants to lift the fly ash free of cost. The claimants as such were entitled to lift fly ash free of cost only upto the completion of the initial period of 5 years from the date commissioning of the system. These dates would be determined on the basis of the respective dates fixed in the meeting heald on 13.06.2007, as already mentioned above in this award. However, in case of Shree Cement as the system had commissioned on 16.10.2007 the period of 5 years would be taken as completed on 15.10.2012.*

*It is also held that the above rate of Rs. 245/- per MT shall be applicable for further 5 years for the date of completion of the initial period of 5 years fixed in the agreement, This shall be subject*

*to permitted variance +/- .5% of base WPI of Gray Cement taken at Rs. 163.10 and subject to veriation (increase/decrease) in proportion to the change in base WPI beyond the permitted variance as has been done in the case of the agreement between Birla Corporation and Adani vide Annexure R-4.*

*Now, as regards the claim of 20% spent by the claimants toward fly ash to be given free of cost the small entrepreneurs by the respondent, I have already adjusted the entire cost of 100% fly ash incurred by the claimant while determining the sale price as mentioned by the claimant in Annexure-58. Thus, the claimant is not entitled to any further claim towards the cost of lifting 20% fly ash.*

*As regards the other claims by the claimants and counter claim by respondent, the same are based on account of the various orders passed by different courts from time to time. No party can be allowed to claim any advantage and disadvantage on the basis of orders passed by Courts. As such, all the other claims made by both the parties are*

*disallowed. As a result of findings recorded above the respondent would be entitled to claim sale price of such quantity of fly ash lifted by claimants for time to time after the completion of the initial period of 5 years at Rs. 245/- per metric ton. The repondent would serve a demand notice by calculating the amount and the claimants shall make payment of such amount within two monts of the receipt of such demand notice, falling which the respondent would be entitled to claim the amount with interest @ 9% per annum from the date of this award.*

*Now, as regards the case of Shree Cement who had agreed to lift fly ash from Unit 6 (ESP Path-A ) is disposed of as Mr. S.L. Bhansali had argued the case on behalf of Shree Cement. According to Mr. S.L. Bhansali, Shree Cement vide letter dated 04.10.2012 had consented and agreed for continuation of supply of fly ash while requesting for extension on similar terms and conditions of the supply of dry fly ash free with the claimant only paying towards power charges,*

*operation and maintenance charges and labour charges. The repondent directed the claimats to keep the system healthy vide letter dated 30th October, 2013 and had demanded Rs. 12 Lakh towards reimbursement of annual operation and maintenance charges and the same stood paid till 31.12.2013. Thus, it is contended that as far as supply of fly ash already taken prior to fixation of any rates by the Hon'ble Supreme Court on 24.03.2014 and that too having been deposited by the claimant, the respondent is not entitled to any further amount for any past period, as the respondent after the receipt of letter dated 04.10.2012 has not made any counter offer till October, 2013, Thus, it has been contended that so far as the claimant- Shree Cement is concerned, it has not at all agreed to pay any price of fly ash to the respondent. It has also been contended that system was commissioned on 16.10.2007 and the initial period of 5 years completed on 15.10.2012 has been admitted by the respondent vide its letter dated 22.12.2007 and in note of discussions held on*

*07.01.2008 filed along with the claim petition of Shree Cement case.*

*In view of my findings recorded in detial in this award, I find no force in the contention of Mr. S.L. Bhansali that the case of Shree Cement stands on different footings and as such is not liable to pay any price of fly ash lifted by them till 31.12.2013. Only distinction in their case is that the date of starting the commission shall be taken as 16.10.2007 and the initial period of 5 years shall be taken as completed on 15.10.2012.*

*The parties shall bear their own expenses.*

18– दिनांक 17.03.2015 को मैसर्स अल्ट्राटेक सीमेन्ट जो कि एक दावाकर्ता है, ने एक आवेदन अन्तर्गत धारा 33 (1) (4) माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम, 1996 के तहत विद्वान एकल पंच के सम्मुख अतिरिक्त पंचाट पारित करने के लिए पेश किया। विद्वान एकल पंच ने अपने आदेश दिनांक 17.05.2015 के द्वारा सीमेन्ट कम्पनी के अतिरिक्त पंचाट पारित करने के आदेश को अस्वीकार करते हुए जो आदेश दिया उसका तात्विक एवं प्रभावी भाग निम्नलिखित हैः–

*"I did not think it necessary to decide the controversy as contemplated in issues no. 6,9, and 10 for the following reasons : -*

*6. Whether the system installed by the Cement Companies shall be the sole property of the respondent after the expiry of the termination of the agreement or still remain the property of the Cement Companies ?*

*9. Whether the transactions in question under the agreement was a lease relating to an immovable property and as such governed by the provisions of the Transfer of Property Act and the Registration Act ?*

*10. Even if lifting of dry fly ash be treated as a license, the installation of its Handling and Maintenance Systems of permanen nature, it became an irrevocable license and what is its effect in the present controversy ?*

*A bare perusal of the issues No. 6,9 and 10 show that it related to the question of rights in the systems installed by the Cement Companies after the expiry or the termination of the agreement and what was the legal nature of such transaction. In view of the fact that I had held the tender process illegal and had allowed the*

*claimants to lift fly ash for further period of 5 years by determining the price and that period was going to complete in 2017 on different dates, I was of the view that there was no controversy in respect of the systems, at present, during the continuance of the agreement. There was no controversy in this regard till the claimants Cement Companies were themselves lifting the fly ash using the systems admittedly installed by the Cement Companies. Hopefully I thought that such dispute may not arise even after 2017 while reviewing the agreement for further period of five years. I further took the view that even for argument sake such controversy, if any, arose in future, the contours of such controversy cannot be envisaged for the present.*

*However, I may further make it clear to remove all doubts that controversy under Issues No. 6,9 and 10 was never decided in the award dated 18.02.2015. It is further made clear that the parties shall be free to get it decided in future by taking appropriate proceedings in a*

*proper forum. In case the applicant Company is forcibly dispossessed during the continuance of the period of agreement, in violation of any terms of the agreement it has right to seek protection in accordance with the law.*

*Thus, in view of the findings and reasons recorded above, I find no case for passing an additional award and the application filed by the claimant company is dismissed. The parties shall bear their own costs. It is made clear that as there was common award in respect of all the five claimants company, this order shall also be applicable to all the parties in the final award.”*

19– निगम व पांच सीमेन्ट कम्पनियों ने अलोच्य पंचाट दिनांक 18.02.2015 को चुनौती दी है। निगम के द्वारा आलौच्य पंचाट को चुनौती देने के साथ विद्वान एकल मध्यस्थ के फैसले दिनांक 17.05.2015 को भी चुनौती दी है। सीमेन्ट कम्पनियों को अपनी आनुषांगिक वेदनाओं के साथ आलौच्य पंचाट से मुख्य मूल वेदना यह है कि विद्वान एकल पंच द्वारा अपने आलौच्य पंचाट में सीमेन्ट कम्पनियों व निगम के मध्य अनुबन्ध का सही निर्वचन नहीं किया है उन्हें केवल पांच वर्ष तक निःशुल्क फ्लाई एश का अधिकारी माना है। उनके द्वारा 245 रू प्रति मैट्रिक टन का भार फ्लाई एश को उठाने हेतु सीमेन्ट कम्पनियों पर लगाया जाना संविदा के दायरे से

बाहर है एवं सीमेन्ट कम्पनियां निगम से अपने फ्लाई एश प्लान्ट के कमीशनिंग होने की तिथि से 25 वर्ष की अवधि तक निगम से फ्लाई एश निःशुल्क प्राप्त करने की अधिकारिणी है। निगम को आलोच्य पंचाट दिनांक 18.02.2015 से कारित मुख्य वेदना यह है कि विद्वान एकल पंच के द्वारा निगम के द्वारा अपने कोटा स्थित इकाई से फ्लाई ऐश के विक्रय के लिए प्रतिस्पर्धात्मक नीलामी द्वारा 2011 में टेंडर निकालने को गलत व अवैद्य माना गया है, जो ठीक नहीं है। निगम एक लोक उपकरण है वह अपनी आसत्तियों की बिक्री पारदर्शिता के साथ टेण्डर प्रक्रिया के साथ ही वैधानिक रूप से कर सकता है। इस कारण विद्वान एकल पंच के द्वारा अपने पंचाट में यह प्रकट किया जाना कि निगम फ्लाई एश की बिक्री को लेकर टेण्डर निकालने के स्थान पर सीमेन्ट कम्पनियों से नेगोशिएशन करे, विद्वान एकल पंच द्वारा ऐसा निर्देश देना विधिनुसार सही नहीं है।

20– यदि निगम एवं सीमेन्ट कम्पनियों के मध्य विवाद की पृष्ठ भूमि पर विचार किया जाये तो प्रार्थी सीमेन्ट कम्पनियों की ओर से प्रस्तुत आवेदन अन्तर्गत धारा 9 मध्यस्थ एवं सुलह अधिनियम 1996 को न्यायालय अपर जिला एवं सेशन न्यायाधीश क्रम संख्या 9, जयपुर महानगर द्वितीय के द्वारा दिनांक 18.02.2012 को स्वीकार किया जाकर यह आदेश प्रदान किया कि–

> *''उपरोक्त चारों प्रार्थीगण के आवेदन संख्या 438 / 11, 439 / 11, 440 / 11 व 445 / 11 स्वीकार कर अप्रार्थी को आदेश दिया जाता है कि वे प्रार्थीगण के साथ निष्पादित इकरारनामा दिनांकित क्रमशः 14.10.04, 02.11.04, 15.11.04 व 07.10.04 बाबत विवाद के संबंध में मध्यस्थ द्वारा पारित किये जाने वाला पंचाट प्रवर्तनीय होने तक वह*

*विवादित आमंत्रित निविदा दिनांक 24.08.11 बाबत कोई अग्रिम कार्यवाही नहीं करें और न तब तक प्रार्थीगण को सप्लाई की जाने वाली फ्लाई एस बाबत कोई रूकावट उत्पन्न करें।''*

21— उक्त आदेश को निगम के द्वारा माननीय राजस्थान उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई। माननीय राजस्थान उच्च न्यायालय द्वारा अपर जिला एवं सेशन न्यायाधीश कम संख्या 9 जयपुर के आदेश आवेदन अन्तर्गत धारा 9 माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम के अधीन दिये गये फैसले को विधि विरूद्ध मानते हुए निम्नलिखित आदेश द्वारा अपास्त किया गयाः—

**(SBCMA Nos. 1862/12, 1859/12, 1860/12, and 1861/12)**

*9- In the instant case it is not disputed that though the appellant-company had executed four separate agreements with the four respondent-companies, the terms and conditions of the agreements, the period during which the said agreements were executed and the period during which plants were commissioned by the said respondents were more or less same. It is also not disputed that the respondent-companies have already filed the applications for the appointment of Arbitrator under Section 11 of the said Act and the said application are pending in the High Court. Now*

*though the learned counsels for the parties have argued at length on the interpretation of the clauses of the agreements in question, it is required to be noted that as per clause 9 of the said agreements, in the event of any question, dispute or difference arising between the parties touching to the construction of any clause contained in the said agreements or the rights, duties or liabilities of the parties in any way touching or arising out of the said agreements, the same were required to be referred for determination by the Arbitrator to be appointed by the CMD, RRVUNL. Hense, as such it is for the Arbitrator, who may be appointed to resolve the disputes of differences between the parties touching the construction of the clauses of the agreements, to decide the same. Since the respective respondents had filed the applications before the court below seeking interim measures under Section 9 of the said Act pending the arbitration proceedings the only question required to be considered by this court would be as to*

*whether the impunged order passed by the court below was legally justified and within the purview of Section 9 or not? of course, for deciding the said question, the court will have to cursorily refer to the clauses of contracts in question.*

*10- So far as the validity of the agreements in question is concerned, as per clause 6 thereof, the respective agreements entered into between the parties were supposed to be in force for a period of 5 years from the date of commissioning of the system, or for a period of 6 years from the date of the signing of the agreement, whichever was later. Since the agreements were signed by the parties somewhere during the period october-november 2004 and the respondent-companies had installed the fly ash system somewhere during the period March-July,2007, the agreements could be said to be in force for a period of 5 years from the date of commissioning of the system i.e. upto March-July, 2012, as the case may be. At this juncture, it is also required to be referred to clause 2.8, according to which the appellant-*

*company had agreed to supply fly ash to the respondent-companies free of cost initially for a period of 5 years and the same was to be reviewed every year on the basis of performance of the firm and then prevailing circumstances. The said clause also stated that the agreement shall be finally reviewed on fresh terms and conditions as agreed mutually for contiunation beyond the period of 5 years. Admittedly, the period of said 5 years has already expired and the agreements in question have not been finally reviewed, nor any fresh terms and consitions as mutually agreed by the parties for continuation of the agreement beyond 5 years have been settled. Thus, the court finds substance in the submission made by the learned counsel for the appellant-company that the period of agreements in question having come to an end by afflux of time and no fresh terms and conditions having been agreed to by and between the parties to the respective agreements in quesiton, the appelant-company was entitled to invite fresh tenders by publishing the NIT.*

*11- Though much emphasis was laid by the learned senior counsel Mr. Kasliwal on the proposal made by the Vikram Cement, which was a unit of Grasim Industries (Now Ultratech Ltd.) which had proposed to continue the contract for a period of 25 years, the said proposal could not be taken into consideration, firstly for the reason that such proposal was not made by the otber three respondent-companies in the Appendix-A annexed to their respective agreements, and secondly for the reason that even the said proposal of Vikram Cement Ltd. was not accepted by the appellant-company. From the bare reading of the said clause 2.14 it clearly transpires that it was agreed between the parties to the respective agreements that the dry ash collection system to be installed by the respondent-companies was to be put in line with the proposal submitted by such party as annexed at Appendix-A, subject to technical feasibility and the system requirements, and that the terms and conditions were to be in accordance with the guidelines issued by the appellant-*

*company and accepted by the respondent-companies as annexed at Appendix-B. Hence the proposal submmited by the respondent-companies as per Appendix-A was with regard to the technical feasibility and system requirements of the dry ash collection system only, and it did not pertain to the validity period of the agreements in question. Again, what was proposed by the Vikram Cement in Appendix-A to its agreement was its opinion that the instalment of the silos at KSTPS premises would be viable if KSTPSagreed for fly ash supply of required quality and quantity for entire long period of 25 years free of cost and that the operaiton and maintenance of fly ash coneying system from power plant to loading silos should be under KSTPS scope. There is nothing on record to suggest that any of the suggestions made by the Vikram Cement was accepted by the appellant-company. On the contrary, it clearly transpires from the terms and conditions contained in the agreements in question that the appellant-company had agreed to supply fly ash free of cost*

*initially for a period of 5 years, which could be continued for a period beyond 5 years only on the terms and conditions as may be mutually agreed upon by the parties as per clause 2.8. It also appears that the respondent-companies had agreed to pay Rs. 12 lakhs per annum to appellant-company, out of which Rs 10 lakhs was to be reimbursed towards maintenance cost of the approach road and Rs. 2 lakhs for the maintenance of cleanliness and surroundings, as per clause 2.13 of the said agreements. It the opinion of Vikram Cement was accepted by the appellant, such clauses would not be there in the agreement.*

*12- It was laso agreed between the parties that the system that may be installed by the respondent-companies would become sole property of the appellant-company on expiry/termination of the agreement, as per clause 2.12. Under the circumstances, it is difficult to accept the submissions made by the learned senior counsel Mr. Kasliwal and other counsels appearing for the*

*respondent-companies that the agreements in question were required to be treated as in force for a period of 25 years, as proposed by the Vikram Cement and were not limited for 5 years. It is trite to say that the Contract Act does not permit the parties to a contract to ignore the specific convenants thereof, and the parties having submitted the tenders with the eyes wide open, they could not claim reliefs in the court of law on the vague plea of equity. As rightly submitted by the learned counsel for the appellant and as per the settled legal position, even the arbitration in the arbitration proceedings could not have travelled beyond the specific terms of the contract, and granted the relief finally as has been granted by the court below at the interim stage under section 9 of the said Act.*

*13- It is further required to be noted that by filing applications under Section 9 of the said Act, the respondent-companies had sought to enforce agreements in question, the nature of which ex-facie appear to be determinable, and as per*

*Section 14(1)(c) of the Specific Relief Act, 1963, a contract whcih is in its nature determinable, cannot be specifically enforced. The court, therefore, is of the opinion that the court below has committed an illegality in entertaining the applications under section 9 of the said Act by granting interim measure requiring the appellant-company to continue with contract, which in its nature ws determinable and which could not be specifically enforced. Further, even if it is presumed that the appellant-company had comitted breach of the terms and conditions of the contract, then also the court below could not have been granted the injunction to prevent the breach of such contract, the performance of which could not be specifically enforce. in view of Section 41(e) of the Specific Relief Act. The court, therefore, is of the opinion that the court below has exceeded its jurisdiction and committed gross illegality in granting the relief at the interim stage, which otherwise could not have been granted by the Arbitrator finally in the arbitration*

*proceedings. There cannot be any disagreement with the ratio of the decisions of the Apex Court relied upon by the learned senior counsel Mr. Kasliwal, however they are hardly of any help to him in the facts and circumstances of the case.*

*14- In that view of the matter, it is held that the impunged common order dated 18.2.12 passed by the court below being illegal, preverse and having been passed without any authority of law, deserves to be set aside and is accordingly set aside. All the four appeals filed by the appellant-company stand allowed accordingly.*

22– निगम के साथ अपने आसन्न विवादों को अधिनिर्णीत करवाने हेतु सीमेन्ट कम्पनियों ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विशेष अनुमति याचिका सिविल अपील संख्या 679 / 2017 दायरी की, जिसमें दिनांक 13.12.2013 को माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित आदेश पारित किया :–

*"Taken on Board. Application seeking exemption from filing official translation is allowed. Issue notice returnable by the 2nd week of January, 2014. Dasti service, in addition, is permitted. In the meanwhile, the respondent-Nigam will not finalise the tenders pursuant to the notice inviting Tender dated 24th*

*August, 2011."*

23– माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दिनांक 14.03.2013 को निम्नलिखित आदेश पारित कियाः–

> *"Heard learned counsel for the parties. By interim order passedby this court on 31st January, 2014 we had directed that there shall be no sale of fly ash without leave of this Court. In modification of the said order, we direct that the respondent-Nigam will sell fly ash to the petitioners at the rate of Rs. 250/- per metric tonne. The question as to whether the petitioners will be entitled to refund of the said Rs. 250/- per MT or any lesser amount will be considered at a later stage. The comtempt proceedings are dropped. The supplies of the fly ash in terms of the interim order passed today will be commeced immediately."*

24– तथा 19.01.2017 को माननीय सर्वोच्च न्यायालय की पीठ ने निम्नलिखित आदेश पारित कियाः–

> *"8. As to whether the orders passed by the different Courts, which culminated in the two orders, extracted hereinabove, dated 13.12.2013 and 14.03.2014, would continue even after the*

*passing of the arbitral award, in our considered view, would depend on the nature of the prayer made by the appellant, when the application under Section 9 was filed, before the concerned Court. We have extracted hereinabove the prayer made by the appellant in its section 9 application. A perusal thereof reveals, that the interim injuction was sought "...till adjudication of the dispute arises between the parties by appointing the arbitrator by the applicant as per Clause 9 of the agreement dated 15.10.2004 signed by and between the applicant and the respondent, passing of the award by the arbitrator, and also till enforcement of the said award....". It is therefore apparent, that the interim prayer made by the appellant under Section 9 of the Act in the very first instance was till the enforcement of the award. It is undoubtedly apparent from a perusal of Section 9 of the Act, extracted above, that the enforcement of the award can be effected only under section 36 of the Act. The aforesaid stage has not yet*

*emerged. The stage presently is of the interregnum, between the passing of the award, and the enforcement of the award under Section 36 of the Act.*

*9. We are of the view, that the prayer madeby the appellant clearly included the period, after the pronouncement of the award by the arbitral Tribunal. In the above view of the matter, it is not possible for us to hold, that the proceedings pending before this court, have been rendered infructuous. In any case, it is now imperative for us to determine whether of not the impugned interim order, should continue till the proceedings under Section 34 of the Act (presently pending before the District Judge) are concluded. We are satisfied in directing, that the appellant shall, with effect from the date of the commencement of the arbitral award, pay for the fly ash taken by it from the respondent at the rate of Rs. 245/- per metric tonne (i.e., in consonance with the arbitral award), till the determination of the proceedings under Section*

*34 of the Act. We however clarify, that in case, for any reason, the arbitral award is set aside or modified, as prayed for by the respondent - Nigam, the appellant would be liable to pay the higher amount, as the respondent would have been able to procure, as disclosed by the auction already held in 2011 (for the period with effect from 2012). Likewise, in case the appellant before this Court Succeeds, and is held to be entitled to pay a lesser amount, the payment with effect from 2012 would be regulated by the said determination.*

*10. The instant appeal stands disposed of in the aforesaid terms.*

*Civil Appeal @ SLP (c) No. 37702/2013, Civil Appeal @ SLP (C) No. 1130/2014, Civil Appeal @ SLP (C) No. 2420/2014, Civil Appeal @ SLP (C) No. 3628/2014, Civil Appeal @ SLP (C) No. 6512/2014, Civil Appeal @ SLP (C) No. 7012/2014 and Civil Appeal @ SLP (C) No. 2128/2017 @ CC No. 8835/2014*

*Permission to file the special leave petition is*

*granted in SLP (C) No. 2128/2017 @ CC No. 8835/2014*

*2. Leave granted.*

*3. Learned counsel for the rival parties are agreed, that the controversy involved in the instant appeals is identical to the one, adjudicated upon by this Court in Civil Appeal @ SLP (C) No. 37709/2013 ( Ultratech Cement Limited Vs Rajasthan Rajya Vidyut Utpadan Nigam Limited), decided on 19.07.2017. They pray, that these appeals may also be disposed of in the similar terms.*

*4. Order Accordingly. Disposed of in the same terms."*

25– निगम व सीमेन्ट कम्पनियों की आपत्ति याचिकाएँ विचाराधीन रहते हुए वाणिज्यिक न्यायालय कम संख्या 4, जयपुर के समक्ष सीमेन्ट कम्पनियों की ओर से धारा 34(4) माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम का प्रार्थना प्रत्र पेश होने पर दोनों पक्षों की बहस सुनने के उपरान्त न्यायालय ने अपने आदेश दिनांक 06.12.2019 के जरिये निम्नलिखित आदेश पारित किया–

*''उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि प्रार्थी कम्पनियॉ यह स्थापित करने में सफल रही है कि मध्यस्थ ने विवाद्यक संख्या 6, 9 व 10 का निर्णय नहीं किया है। उक्त विवाद्यकों पर निर्णय पारित नहीं किया जाना पंचाट को अपास्त*

*करने के आधार की परिधि में आता है। ऐसी स्थिति में प्रार्थी कम्पनियों द्वारा प्रस्तुत प्रार्थना पत्र निम्नप्रकार स्वीकार किया गया:–*

*1– यह कि आपत्ति प्रार्थना पत्र की सुनवाई को 3 माह के लिए स्थगित (।करवनतद) किया जाता है।*

*2– मध्यस्थ इसके लिए स्वतंत्र होगा कि वह प्रक्रिया प्रारम्भ करें या और अन्य कोई कदम उठाये जो उनकी राय में पंचाट को अपास्त किये जाने के आधार को समाप्त करने के लिए उचित हो। यदि मध्यस्थ कार्यवाही प्रारम्भ करना चाहे तो पक्षकारों को सूचना पत्र जारी कर सुनवाई की दिनांक निश्चित कर अग्रिम कार्यवाही करे।*

*3– मध्यस्थ से निवेदन किया जाता है कि वह अपने निर्णय से 3 माह के भीतर न्यायालय को अवगत करावे ताकि न्यायालय आपत्ति प्रार्थना पत्र पर अग्रिम कार्यवाही कर सकें।*

*4– यहां यह स्पष्ट किया जाता है कि उपरोक्त आदेश में पंचाट को अपास्त किये जाने का आधार मौजूद होने का प्रकट किया गया आधार प्रथम दृष्टया मत है न कि अंतिम निष्कर्ष इसलिए मध्यस्थ इस आदेश में प्रकट किये गये मत से प्रभावित हुए बिना कार्यवाही करे।*

*5– आदेश की एक–एक प्रति दोनों पक्षकारों को उपलब्ध करवायी जावे तथा आदेश की प्रति के साथ मध्यस्थ का तलबशुदा अभिलेख मध्यस्थ को लौटाया जावे। ''*

26– उक्त आदेश से व्यथित होकर अप्रार्थी राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड ने माननीय राजस्थान उच्च न्यायालय में डीबी सिविल रिट पिटीशन संख्या 4451 / 2019 प्रस्तुत की, जिस पर सुनवाई करने के उपरान्त माननीय राजस्थान उच्च न्यायालय ने अपने आदेश दिनांक 09.05.2019 के जरिये यह निर्देशित किया

कि रिट पिटीशन के लंबित रहने के दौरान उक्त आदेश का प्रभाव स्थागित किया जाता है। माननीय राजस्थान उच्च न्यायालय में कार्यवाही लंबित करने के दौरान ही विद्वान एकल पंच महोदय का स्वर्गवास हो गया, जिसकी सूचना माननीय उच्च न्यायालय में दौराने सुनवाई दी गई और माननीय उच्च न्यायालय ने अपने आदेश दिनांक 20.07.2021 के जरिये परिवर्तित तथ्यों एवं परिस्थितियों में मामले को धारा 34 (4) माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम पर सुनवाई हेतु अधीनस्थ न्यायालय को प्रतिप्रेषित कर निम्नलिखित आदेश पारित कियाः–

> *"This court due to subsequent development does not deem it proper to adjudicate the issue involved in the writ petitions and as has been agreed by both the learned senior counsel for the parties, the matters are remanded back to the Commercial Court to take up the applications filed by the parties under Section 34(4) of the Act of 1996.*
>
> *Accordingly, the writ petitions are disposed of and Commercial Court may also expedite the disposal of the application as has been observed by Hon'ble Apex Court in Misc. Application No. 2214/2020-Ultratech Cement Ltd. Vs. Rajasthan Rajya Vidyut Utpadan Nigam Ltd. (supra). This Court also makes it clear that earlier order passed by the Commercial Court will not influence the present proceedings which are undertaken now.*
>
> ***A copy of this order be separately placed in***

***each petition."***

27– धारा 34 (4) माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम पर मामला प्रतिप्रेषित होकर प्राप्त होने पर वाणिज्यिक न्यायालय क्रम संख्या 4 जयपुर ने उभय पक्षों को सुनकर दिनांक 18.09.2021 को निम्नलिखित आदेश पारित किया –

> *''इस न्यायालय के विनम्र मत में प्रकरण की बदली हुई परिस्थितियों में अधिनियम, 1996 की धारा 34 (4) के अन्तर्गत प्रकरण को विवाद्यक नम्बर 6, 9 व 10 के पुनः निस्तारण के लिए प्रतिप्रेषित किया जाना उचित नहीं पाया जाता है, ऐसा करना प्रकरण में उलझाव एवं अनावश्यक विलम्ब पैदा करेगा। इसलिए अधिनियम, 1996 की धारा 34 के आपत्ति प्रार्थना पत्र का निस्तारण गुणावगुण के आधार पर ही किया जाना न्यायोचित एवं समीचीन है।*
>
> *अतः प्रकरण को प्रतिप्रेषित करने की प्रार्थी की प्रार्थना अस्वीकार की जाती है। पत्रावली गुणावगुण के आधार पर बहस के लिए नियत की जावे। आदेश की एक–एक प्रति अन्य प्रकरणों में नियमानुसार संलग्न की जावे।''*

28– विनिर्माण गतिविधि और भवन निर्माण के कार्यों में फ्लाई एश के उपयोग को प्रोत्साहित करने के लिये केन्द्र सरकार के पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने दिनांक 14.09.1999 को एक अधिसूचना एस ओ 763 (ई) भारत के गजट में प्रकाशित हुई, जो इसके प्रकाशन की तिथि से प्रवृत्त हुई। इस अधिसूचना के पैरा संख्या 2 में :–

> *2(1) Every coal or lignite based thermal power plant shall make avilable ash, for at least ten years from the date of publication of this*

*notification, without any payment or any other consideration, for the purpose of bricks, panels or any other material or for construction of roads, embankments, dams, dykes or for any other construction activity.*

29– केन्द्र सरकार के पर्यावरण एवं वन मंत्रालय दिनांक 03.11.2009 को एक अधिसूचना एस ओ 2804 (ई) भारत के गजट में प्रकाशित हुई, जो इसके प्रकाशन की तिथि से प्रवृत्त हुई। इस अधिसूचना के पैरा संख्या 3 में :–

*3(1) In the said notification, Paragraph 2 -*
*(a) for sub-paragraphs (1), (2) and (3), the following sub-paragraphs shall be substituted, namely :-*
*(1) All Coal or lignite based thermal power stations would be free to sell fly ash to the user agencies subject to the following conditions, namely :-*

*(i) the pond ash should be made availabe free of any charge on "as is where is basis" to manufacturers of bricks, blocks or tiles including clay fly ash product manufacturing unit (s), farmers, the Central and the state road construction agencies, Public Works Department, and to agencies engaged in backfilling or stowing of mines.*

*(ii) as least 20% of dry ESP fly ash shall be made available free of charge to units manufacturing fly ash or clay fly ash bricks, blocks and tiles on a priority basis over other users and if the demand from such agencies falls short of 20% of quantity, the balance quantity can be sold or disposed of by the power station as may be prossible ;*

*Provided that the fly ash obtained from the thermal power station should be utilized only for the*

*purpose for which it was obtained from the thermal power station or plant falling which no fly ash shall be made available to the defaulting users.*

30— आलोच्य पंचाट 18.02.2015 के मुताबिक सीमेन्ट कम्पनियां उनके द्वारा फ्लाई ऐश सिस्टम के कमीशनींग हो जाने के पांच वर्ष की अवधि तक निःशुल्क फ्लाई ऐश प्राप्त करने की हकदार थी। निगम व सीमेन्ट कम्पनियों की विधिक वाणिज्यिक नातेदारी पर विचार किया जावे तो यह तथ्य प्रकट होते हैं कि निगम एवं सीमेन्ट कम्पनियों के बीच एक करार का सृजन हुआ। सृजित करार के गर्भ से सीमेन्ट कम्पनियों को निगम के संयत्र से फ्लाई ऐश ले जाने का संविदात्मक अधिकार मिला। वर्ष 2007 से 2012 के प्रथम पांच वर्षों की अवधि में भी निगम व सीमेन्ट कम्पनियों के मध्य ''क्विड प्रो कुओ'' की विद्यमानता रही है। सीमेन्ट कम्पनियों का निगम के संयत्र में फ्लाई एश प्लांट की कमीशनिंग का वचन निगम द्वारा इस वचन के बदले में उन्हें निःशुल्क फ्लाई ऐश ले जाने का अधिकार देने का वचन '' बदले में कुछ '' घटक का निर्माण करता है और एक वैद्य संविदा का निर्माण करता है। ऐसे वचन जो एक दूसरे के निमित्त प्रतिफल हो करार का निर्माण करता है और ऐसे करार जो विधि द्वारा प्रवर्तनीय हो, संविदा बनाते हैं। सीमेन्ट कम्पनियों द्वारा निगम के वचनों पर कार्य करते हुये फ्लाई एश के निस्तारण हेतु जो संयत्र स्थापित किये गये उनमें एक बडी राशि खर्च हुई। विधि की दृष्टि में प्रतिफल एक ऐसा घ ाटक होता है जिसका कोई वैधानिक मूल्य होता है। प्रथम पांच वर्ष में सीमेन्ट कम्पनियां यदि अनुबन्ध के अनुसार निःशुल्क फ्लाई ऐश को प्राप्त करने का अधिकार रख रही थी तो यह विधि के दृष्टि में प्रतिफल सहित था।

31— आलौच्य पंचाट में अंतर्ग्रस्त संविदात्मक विवाद की संबंधता 1999 व 2009 की

भारत सरकार की अधिसूचनाओं से होने के कारण एवं न्यायालय द्वारा इस विधि के प्रवर्तन के कारण संविदा पर पडने वाले प्रभावों पर विचार किया जाना भी अपरिहार्य है। सर्वप्रथम हम संविधान की रूह से विधि के बारे में अनुच्छेद 13 में प्रावधान पाते हैः–

> ''अनुच्छेद 13ः– मूल अधिकारों से असंगत या उनका अल्पीकरण करने वाली विधियॉ
>
> 13(1) ः– xxxxxxxxx
>
> 13(2) ः– xxxxxxxxx
>
> 13(3) ः– इस अनुच्छेद में जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो
>
> (क) ः– **''विधि''** के अन्तर्गत भारत के राज्य क्षेत्र में विधि का बल रखने वाला कोई अध्यादेश, आदेश, उपविधि, नियम, विनियम, **अधिसूचना**, रूढ़ि या प्रथा है।
>
> संविदा को भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 2(एच) में परिभाषित किया गया है–
>
> ''विधि द्वारा प्रवर्तित करार संविदा है।''

32– संविदा विधि के अनुसार संविदा निष्पादनीय अथवा निष्पादित दोनों भांति की हो सकती है। विधि का यह सुस्थापित सिद्धान्त है कि जब संविदा निष्पादित हो जाये तब संविदा उन्मोचित हो जाती है। सीमेन्ट कम्पनियों के निगम के साथ फ्लाई ऐश के उपभोग के निमित्त जो अनुबंध हुए उनके अनुसरण में कोटा सुपर थर्मल पावर संयंत्र की विभिन्न इकाईयों में फ्लाई ऐश हैण्डलिंग सिस्टम का संस्थापन वर्ष 2007 में हो चुका था। निगम व सीमेन्ट कम्पनी के बीच हुए अनुबंध की एक

शर्त यह भी थी कि –

> *2.8* *RRVUNL agrees to supply fly ash free of cost, initially for a period of 5 years and the same may be reviewed every year on the basis of performance of the firm (GIL) and then prevailing circumstances. The agrement shall finally be reviewed on fresh terms and conditions as agreed mutually for continuation beyond the period of 5 years.*

33– अनुबंध की इस शर्त का सामान्य अर्थान्वयन यह निकलता है कि निगम के द्व ारा प्रारम्भिक पांच वर्षों हेतु सीमेन्ट कम्पनियों को फ्लाई ऐश की आपूर्ति की जानी थी। करार को अंतिम रूप से निगम के द्वारा ताजा निबंधनों और शर्तो पर पुनर्विचारित कर परस्पर सहमति से पांच वर्ष के उपरान्त भी जारी रखा जा सकता था। न्यायालय के विनम्र मत में अनुबंध के निबंधनोनुसार निगम व सीमेन्ट कम्पनियों के बीच संविदा का उन्मोचन निष्पादन होकर पांच वर्ष के पर्यवसान पर होना था। विधिक तकनीकी दृष्टि से यदि निगम अनुबंध की शर्तों और निबंधनों पर पुनर्विचार नहीं करता उस स्थिति में पांच वर्ष की समाप्ति पर निगम व सीमेंट कम्पनियों के बीच में हुई संविदा उन्मोचन को प्राप्त हो जाती है।

34– भारत का सविंधान देश की मूल विधि है। भारत के संविधान का अनुच्छेद 13(3)(क) स्पष्ट रूप से प्रावधानिक करता है कि **अधिसूचना** विधि की कोटि में आती है। संघ की शक्तियों के अधीन वन एवं पर्यावरण मंत्रालय द्वारा दिनांक 14 सितम्बर 1999 को जारी व 03 नवम्बर 2009 को जारी की **अधिसूचनायें** भी सक्षम

प्राधिकारी द्वारा विनिर्मित विधि है।

35– यह एक सुस्थापित तथ्य है कि कोई भी संविदा प्रवृत विधि के विरोध में रहकर अस्तित्वमान नहीं रह सकती है। भारत का संविधान एक मूल व सर्वोच्च विधि है जिसकी अधिभाविता भारत की अन्य समस्त विधियों पर है। राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड व सीमेन्ट कम्पनियों ने 1999 की उक्त अधिसूचना को एक विधि मानकर उसके अनुसरण में कोटा थर्मल पावर संयत्र से फ्लाई ऐश को प्राप्त करने के तंत्र स्थापित किये गये एवम् फ्लाई ऐश निशुल्क प्राप्त कर परिवहनित की गई।

36– उदाहरण के तौर पर मंगलम सीमेन्ट कम्पनी का राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड के साथ फलाई ऐश के उपभोग / व्ययन हेतु एक लिखित समझौता किया गया। अन्य चार सीमेन्ट कम्पनियों के साथ भी इस निमित्त हुये लिखित समझौते में पर्याप्त सादृश्यता है। इस लिखित समझौते दिनांक 02.10.2004 के खण्ड संख्या 3.7 में अंकित है–

> *"MCL agrees to follow all applicable rules, regulations, norris, safety measures, insurance for all personnel, materials, machinery etc as said down by State/ Central Government Departments/ Agencies."*

37– अनुबंध खण्ड 3.7 के अवलोकन से स्पष्ट है कि मंगलम सीमेन्ट लिमिटेड इस बात से सहमत हुई कि वह स्टेट और केन्द्रीय सरकार के सभी नियम विनियम मानको, सुरक्षा मानको इत्यादि को मानेगी। ऐसे समान संविदा शर्ते सभी सीमेन्ट

कम्पनियों की संविदा में निहित है। विधि के प्रवर्तन के लिये संविदा के किसी पक्षकार की सहमति सदैव एक वांछनीय तत्व नहीं होता है। विधि, संविदा से गुरूतर होती हैं एवम् संविदा पर अधिभावी होती है। विधि एवं संविदा के किसी खण्ड में टकराव की स्थिति में विधि सदैव विजयी रहती है। 1999 व 2009 की अधिसूचनाये तत्समय प्रवृत विधि की परिधि में आती है। न्यायालय के विनम्र मत में यह दोनो अधिसूचना विधि का बल रखने के कारण सभी संविदाओं जिनमें अलौच्य अवार्ड को चुनौती देने वाली सीमेन्ट कम्पनियों की संविदायें भी है, पर अधिभावी है।

38– न्यायालय का विनम्र मत है कि जैसे ही 2009 की अधिसूचना प्रकाशन में आयी ये अपने क्षेत्राधिकार में लागू हो गई तथा इस अधिसूचना के व्यतिक्रम में किया कार्य विधिमान्य नहीं रह गया। इस अधिसूचना का प्रभाव निगम व सीमेन्ट कम्पनियों के करार पर तस्लीम होता है और यदि कोई विधि संविदा के पालन को प्रभावित करती है, तो ये संविदा के नैराश्य को जन्म दे सकता है।

39– सीमेन्ट कम्पनियों का एक तर्क यह भी रहा है कि अनुबंध के मुताबिक निगम द्वारा उन्हें 25 वर्षों तक फ्लाई ऐश की निःशुल्क आपूर्ति की जानी थी। निगम अपने अनुबधं के द्वारा इस निमित्त बाध्य था। न्यायालय द्वारा सीमेन्ट कम्पनियों के इस तर्क के आयाम पर भी विधिक प्रज्ञा के स्तर पर विचार किया गया। सीमेन्ट कम्पनियों के निवेदन व पत्रावली की सामग्री से आंकलन किया जाये तो उनके निगम के साथ हुए वाणिज्यिक करार व संव्यवहारों के निमित्त निम्नलिखित तथ्यात्मक स्थिति उजागर होती हैः–

| क्र. सं. | कम्पनी का नाम | सिस्टम कमीशन तिथि | प्रथम पांच वर्ष समापन तिथि | द्वितीय पांच वर्ष समापन तिथि | तृतीय पांच वर्ष समापन तिथि | चतुर्थ पांच वर्ष समापन तिथि |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | अल्ट्राटेक | 30.06.2007 | 29.06.2012 | 29.06.2017 | 29.06.2022 | 29.06.2027 |
| 2 | श्री सीमेन्ट | 16.10.2007 | 15.10.2012 | 15.10.2017 | 15.10.2022 | 15.10.2027 |
| 3 | मंगलम | 31.07.2007 | 30.07.2012 | 30.07.2017 | 30.07.2022 | 30.07.2027 |
| 4 | बिरला | 29.03.2007 | 28.03.2012 | 28.03.2017 | 28.03.2022 | 28.03.2027 |
| 5 | एसीसी | 30.06.2007 | 29.06.2012 | 29.06.2017 | 29.06.2022 | 29.06.2027 |

40— धारा 56 भारतीय संविदा अधिनियम 1872 में संविदा के नैराशय का सिद्धान्त निहित है। जब विधि के किसी कार्य से संविदा पर प्रभाव पड़ता है और ऐसा कार्य विधिपूर्ण नहीं रह जाता है ऐसी स्थिति में संविदा के नैराशय का सिद्धान्त का आहवान होता है। 14 सितम्बर 1999 की अधिसूचना के द्वारा सीमेन्ट कम्पनियों को निशुल्क फ्लाई ऐश प्राप्त करने का अधिकार उदभूत हुआ। इस अधिसूचना का आश्रय लेकर राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड के द्वारा सीमेन्ट कम्पनियों के साथ उनके द्वारा कोटा थर्मल पावर संयत्र से फ्लाई ऐश को प्राप्त व परिवहनित करने के निमित्त अनुबंध किये गये। इन अनुबंधों के अनुसरण में सीमेन्ट कम्पनियों फ्लाई ऐश संयत्र के वर्ष 2007 में अलग—अलग तिथियों पर कमीशन हो जाने के उपरान्त प्रारम्भिक 5 वर्षो तक फ्लाई ऐश को प्राप्त व परिवहनित किया गया। न्यायालय का यह सुदृढ मत है कि सीमेन्ट कम्पनियों के कमिशनिंग की तिथि के पांच वर्ष की अवधि के पर्यवसान के पश्चात् सीमेन्ट कम्पनियों व निगम की संविदा उन्मोचित हो गई थी। ऐसी उन्मोचित संविदा का नवीयन केवल मात्र सीमेन्ट कम्पनियों के आग्रह पर आत्यांतिक रूप से अधिरोहित एवं अभिवृद्धित नहीं किया जा

सकता था वरन् संविदा को आगे जारी रखने व निगम के द्वारा करार का ताजा निबंधनों व शर्तों पर प्रवृत्त परिस्थितियों में पुनर्विचार किया जाना था।

41– सीमेन्ट कम्पनियों व निगम के साथ हुए लिखित समझौते के साथ अपेण्डिक्स बी भी संलग्न है जिसके खण्ड 9–ए व 9–बी निम्नलिखितानुसार हैः–

| | | |
|---|---|---|
| 9(A) | The agreement between the firm & RVUN/KTPS shall be for 5 years initially. | Agreed. |
| (B) | The agreement shall be reviewed every year on the basis of performance of the firm. | Agreed. |

42– पुनर्विचार का अधिकार निगम का एक स्वतंत्र और स्वविवेकीय अन्तश्चेतना से प्रयोक्तव्य अधिकार था। सीमेन्ट कम्पनियों के अनुबंध के साथ जुड़े अपेन्डिक्स–बी के खण्ड 9–ए व 9–बी के अनुशीलन से भी यह तथ्य स्पष्ट होता है कि सीमेन्ट कम्पनियों व निगम के बीच अनुबंध प्रारम्भ में केवल पांच वर्षों हेतु करारित था, एतद् पांच वर्ष के समापन पर अनुबंध निष्पादित होकर उन्मोचित हो गया था। इन तथ्यों से प्रकट होता है कि आलौच्य अवार्ड दिनांक 18.02.2015 व माध्यस्थम आदेश दिनांक 17.05.2015 की अन्तर्वस्तु से अनुबंध का समय पांच वर्ष और आगे बढ़ाया गया है। विद्वान एकल पंच के द्वारा पक्षकारान के मध्य हुए अनुबंध के प्रभाव एवं पक्षकारान के कानूनी हकूक तथा फरायज का सही निर्वचन अपने आलौच्य पंचाट में नहीं किया है और ऐसा प्रतीत होता है कि पंचाट को पारित करते समय अनुबंध के दायरों से बहिर्गमन किया गया है। विद्वान माध्यस्थम अधिकरण द्वारा अनुबंध की परिधि का प्रत्यक्तिकरण विधिनुसार अनुमन्य नहीं है और प्रकट अवैधता की कोटि में आता है।

43– दिनांक 03 नवम्बर 2009 को जारी अधिसूचना भी भारतीय संविधान के अनुच्छेद 13 की रूह से विधि की श्रेणी में आती है। इस अधिसूचना के द्वारा सीमेन्ट कम्पनियों को फ्लाई ऐश निशुल्क दिये जाने के स्थान पर उनको फ्लाई ऐश के विक्रय किये जाने का प्रावधान किया। अवार्ड के पक्षकारान के मध्य मूल विवाद व आनुषांगिक विवादों का सृजन वर्ष 2009 की अधिसूचना के प्रभाव में आने के उपरान्त हुआ। सीमेन्ट कम्पनियों का यह स्वःमत है कि वे राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड से अनुबंध के अनुसार 25 वर्ष तक वे फ्लाई ऐश पाने के अधिकारी है। राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड का यह स्वःमत है कि वे एक लोक उपक्रम है एवम् 2009 की अधिसूचना के प्रभाव में आने के उपरांत वे अपने कोटा थर्मल पावर संयत्र से निशुल्क फ्लाई ऐश सीमेन्ट कम्पनियों द्वारा प्राप्त किये जाने को विधि अनुसार अनुमत नहीं कर सकते। सीमेन्ट कम्पनियॉ जब 1999 की अधिसूचना से सृजित लाभों को निगम से हुई संविदा के मार्फत प्राप्त किया तो 2009 की अधिसूचना के प्रभावों से सीमेन्ट कम्पनियॉ पलायन नहीं कर सकती है।

44– माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम की धारा 31 विद्वान एकल पंच पर इस बात का दायित्व अधिरोपित करती है कि माध्यस्थम पंचाट सकारण होगा। माध्यस्थम पंचाट के निष्कर्ष में कारणों का अभाव माध्यस्थम पंचाट को खण्डनीय बनाता है। माध्यस्थम पंचाट को केवल धारा 34 के सुसंगत प्रावधानों के अतिलंघन में ही अपास्त किया जा सकता है अन्यथा नहीं। माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम के अनुसार–

***''धारा – 31***

*माध्यस्थम पंचाट का प्ररूप और उसकी विषय वस्तु*

*(1)* ***XXXXXXXX***

*(2) XXXXXXXX*
*(3). माध्यस्थम् पंचाट में वे कारण अभिकथित होंगे जिन पर वह आधारित है, जब तक कि–*
*(क) पक्षकारों ने यह करार न किया हो कि कोई कारण नहीं दिये जाने है, या*
*(ख) पंचाट, धारा 30 के अधीन करार पाए गए निबन्धनों पर माध्यस्थम पंचाट है।*

***धारा –33***

*पंचाट का सुधार और निर्वचन, अतिरिक्त पंचाट*

*(1) XXXXXXXX*

*(2) XXXXXXXX*

*(3) XXXXXXXX*

*(4) जब तक कि पक्षकारों में अन्यथा सहमति न हो, एक पक्षकार, दूसरे पक्षकार को सूचना देकर माध्यस्थम पंचाट की प्राप्ति से तीस दिन के भीतर माध्यस्थम् कार्यवाहियों में प्रस्तुत किये गये उन दावों की बाबत जिन पर माध्यस्थम् पंचाट में लोप हो गया है, एक अतिरिक्त माध्यस्थम पंचाट देने के लिये माध्यस्थम अधिकरण से अनुरोध कर सकेगा।*

***धारा – 34***

*माध्यस्थम पंचाट अपास्त करने के लिये आवेदन*

*(ख) न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि –*

*(i) XXXXXXXX*

*(ii) माध्यस्थम पंचाट भारत की लोक नीति के विरूद्ध है।*

***स्पष्टीकरण 1.*** *– किसी शंका को दूर करने के लिये यह स्पष्ट किया जाता है कि कोई भी पंचाट  भारत की लोक नीति के विरूद्ध केवल तभी होगा, यदि –*

*(i) पंचाट का दिया जाना कपट या भ्रष्टाचार द्वारा उत्प्रेरित है या प्रभावित किया गया है अथवा वह धारा 75 या धारा 81 के अतिक्रमण में है, या*

*(ii) वह भातीय विधि की मूलभूत नीति के उल्लंघन में है , या*

*(iii) वह नैतिकता या न्याय की अत्यंत आधारभूत धारणा के विरोध में है।*

***स्पष्टीकरण 2*** *– शंका को दूर करने के लिये, इस बात की जांच कि भातीय विधि की मूलभूत नीति का उल्लंघन हुआ है अथवा नहीं, विवाद के गुणागुण के पुनर्विलोकन की आवश्यक नहीं बनाएगी।''*

45– माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने सिविल अपील नम्बर 2153 / 2010 अनवान डायना टेक्नॉलोजी बनाम मैसर्स क्रॉम्पटम ग्रेआवेज लिमिटेड में माननीय न्यायमूर्तियों की तीन सदस्य पीठ ने मत व्यक्त किया है कि यदि आर्बिट्रेटर द्वारा पारित अवार्ड पर्याप्त कारणों को दिये बिना पारित किया है तो यह अबोधगम्य हो जाता है, इस कारण यह संधारणीय नहीं रह जाता है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने धारा 31 (3) माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम के प्रावधानों की विवचेना करते हुए निर्धारित किया कि–

> *"When we consider the requirement of a reasoned order three characteristics of a reasoned order can be fathomed. They are: proper, intelligible and adequate."*

46– माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस नजीर के पैरा नम्बर 43 में यह मत व्यक्त किया है कि–

> "*From the facts, we can only state that from a perusal of the award. In the facts and circumstances of the case, it has been rendered without reasons. However, the muddled and confused from the award has invited the High Court to state that the arbitrator has merely restated the contentions of both parties From a persual of the award. The inadequate reasoning and basing the award on the approval of the respondent herein cannot be stated to be appropriate considering the complexity of the issue involved herein. And accordingly the award is unintelligible and cannot be sustained.*"

47– माननीय उच्चतम न्यायालय ने अपने उक्त फैसले में यह निर्धारित किया है कि बिना पर्याप्त कारणों के पारित किया गया अवार्ड अबोधगम्य होता है और इसलिये असंधारणीय होता है। आलोच्य अवार्ड दिनांक 18.02.2015 की अर्न्तवस्तु से गुजरा जाये तो यह तथ्य स्पष्ट रूप से प्रकट होता है कि विद्यमान एकल पंच महोदय द्वारा विवाद्यक संख्या 6,9 व 10 को अनुतरित छोडा गया है। विद्वान एकल पंच महोदय द्वारा दिनांक 17.05.2015 को पारित अतिरिक्त अवार्ड पारित करने के

आवेदन पर पारित किये गये अपने माध्यस्थम फैसले में इस बात को स्वीकार किया है कि उनके द्वारा अपने मूल अवार्ड दिनांक 18.02.2015 में विवाद्यक संख्या 6,9 व 10 को विनिश्चित नहीं किया गया है। इन विवाद्यकों के निमित्त उन्होंने अपना मत व्यक्त किया है कि पक्षकार इन्हें भविष्य में उचित कार्यवाहियों द्वारा उचित मंच पर विनिश्चित करवाने के लिये मुक्त होंगी। माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम की धारा 7 जो माध्यस्थम करार को प्रावधानित करती है, के तहत माध्यस्थम के पक्षकार अपने सभी या कतिपय विवादों को माध्यस्थम को संदर्भित कर सकते हैं। विधि का यह प्रावधान वर्तमान व भावी दोनों विवादों जो कि माध्यस्थम के पक्षकारान के बीच हो, को माध्यस्थम को संदर्भित करने की अनुज्ञा देता है।

48– प्रथम दृष्टया विद्वान एकल पंच के द्वारा अपने मूल अवार्ड दिनांक 18.02.2015 में विवाद्यक संख्या 6,9 व 10 को विनिश्चित नहीं किया जाना विधि की दृष्टि में प्रकट दोष प्रतीत होता है। माध्यस्थम अधिनियम की मूल विधायी भावना यही है कि वह विवाद जो निस्तारण हेतु विद्वान माध्यस्थ के सम्मुख आये उनका विधि अनुसार माध्यस्थम अधिकरण निस्तारण करें। धारा 31(3) माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम इस बात का वैधानिक दायित्व डालती है कि माध्यस्थम पंचाट में वे कारण अभिलिखित होंगे जिन पर पंचाट आधारित है। यह एक निर्विवाद तथ्य है कि विद्वान एकल पंच द्वारा विवाद्यक संख्या 6,9 व 10 पर अपने विनिश्चित पंचाट में कोई निष्कर्ष नहीं दिया गया है। विधि यह वांछा करती है जहां किसी विवाद्यक पर निष्कर्ष दिया जाये वह कारण सहित हो।

49– विद्वान उच्चतम न्यायालय द्वारा अपनी विभिन्न नजीरो में यह सुस्थापित किया है कि माध्यस्थम का पंचाट उचित, बोधगम्य व कारण सहित होना चाहिये।

युक्तियुक्त पर्याप्त कारणों का अभाव माध्यस्थम पंचाट को खण्डनीय बनाता है। आलौच्य पंचाट दिनांक 18.02.2015 व माध्यस्थम के फैसले दिनांक 17.05.2015 का सांगोपांग अनुशीलन से यह तथ्य भली प्रकार से स्पष्ट होता है कि विद्वान एकल पंच के द्वारा माध्यस्थम कार्यवाही के दौरान 14 विवाद्यक निर्मित किये गये। विद्वान एकल पंच द्वारा आलौच्य पंचाट दिनांक 18.02.2015 में विवाद्यक संख्या 6, 9 व 10 पर अपना कोई निष्कर्ष कायम नहीं किया है।

50– विद्वान एकल पंच के माध्यस्थम फैसले दिनांक 17.05.2015 में विद्वान एकल पंच ने स्वयं संदेह से परे इस बात को स्वीकार किया है कि उनके द्वारा विवाद्यक संख्या 6, 9 व 10 को विनिश्चित नहीं किया गया है। विद्वान एकल पंच ने अपने 17.05.2015 के आदेश में कहा है कि पक्षकारान भविष्य में उचित कार्यवाही उचित मंच के समक्ष कर इन विवाद्यकों को विनिश्चित करवा सकेंगे। इस आदेश में उन्होंने यह भी अंकित किया है कि यदि करार के किसी निबंधनों के उल्लंघन में, करार के विद्यमान रहने की अवधि में प्रार्थी कम्पनी बल पूर्वक बेकब्जा किया जाता है तो कम्पनी को विधि अनुसार संरक्षण पाने का अधिकार रहेगा। इस आदेश की रूह से प्रकट होता है कि विद्वान एकल पंच द्वारा राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड व अन्य सीमेन्ट कम्पनियों के मध्य करार के पर्यवसान की किसी विनिर्दिष्ट तिथि का कोई अंकन नहीं किया है।

51– विद्वान एकल पंच के द्वारा इस विनिर्दिष्ट तथ्य का कि 2017 के पश्चात करार के जारी रहने के दौरान सीमेन्ट कम्पनियां किस परिवर्तित अथवा बढ़ी हुई

राशि से प्रति मेट्रिक टन फ्लाई ऐश हेतु भुगतान करेंगी कोई विशद मत प्रकट नही किया है। आलौच्य अवार्ड दिनांक 18.02.2015 के अनुसरण से प्रकट है कि विद्वान एकल पंच के द्वारा यह तथ्य निर्धारित किया गया था कि सीमेन्ट कम्पनियां अपने फ्लाई ऐश संयत्रों के स्थापन से जो कि 2007 में था से अगले 5 प्रारंभिक वर्षो तक निशुल्क सीमेन्ट प्राप्त कर परिवहन करने की अधिकारिणी है। अगले 5 वर्षो के लिये माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा 250/– रूपये प्रति मेट्रिक की जो राशि तय की गई थी उसे न्यून कर विद्वान एकल पंच द्वारा 245/– रूपये पर मेट्रिक टन कर दिया गया। न्यायहित पर विचारोपरान्त अद्यतन में निगम द्वारा वर्ष 2012 से वर्ष 2017 की अवधि के मध्य सीमेन्ट कम्पनियों द्वारा फ्लाई ऐश की बिक्री पर 245/– रूपये प्रति मैट्रिक टन की प्रतिफल के रूप मे प्राप्त राशि युक्तियुक्त एवं उचित मालूम पड़ती है। यह राशि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अपने व्यक्त मत के अनुसरण में भी है। इस राशि बाबत न्यायालय का सुदृढ मत है कि इस राशि में अब कोई विचलन पक्षकारान के मध्य विवादों को और अधिक अभिवृद्धित करेगा। न्यायालय का यह स्पष्ट मत है कि निगम द्वारा वर्ष 2012 से 2017 के मध्य सीमेन्ट कम्पनियों से अनुबंध के अनुसरण में फ्लाई ऐश के विकय के प्रतिफल के रूप में प्राप्त 245/– रूपये प्रति मैट्रिक टन की इस राशि में विचलन पक्षकारान के इस विहित अवधि में स्थिर हो चुके विवाद के जख्मों को पुनः खोलने के समान होगा।

52– समय के बीतने के साथ महंगाई का बढ़ना वाणिज्यिक जगत में एक सामान्य परिघटना है। राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड एक लोक उपकम है। लोक उपकरण का आसत्तियों को सस्ते में भी विकय करना राष्ट्र के

वाणिज्यिक हितों पर कुठाराघात है। यदि वर्ष 2012 से वर्ष 2017 में यदि राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड सीमेन्ट कम्पनियों को अनुबंध पेटे दी जाने वाली फ्लाई ऐश के निमित्त 245/– रूपये प्रति मेट्रिक टन वसूल पाने का अधिकारी था तो निश्चित ही अगले पांच वर्षो में इस राशि में बढोतरी किया जाना युक्तियुक्त, व्यवहारिक एवम् वाणिज्यिक संव्यवहारों के अनुकूल प्रतीत होता है। विद्वान एकल पंच के द्वारा ऐसी कोई बढ़ी हुई विनिर्दिष्ट राशि इस अवधि के निमित्त तय नहीं की गई। विद्वान एकल पंच के द्वारा ऐसा कोई प्रक्रिया, फॉर्मूला अथवा व्यवस्था अपने पंचाट में नहीं की गई जिससे यह स्पष्ट रूप से प्रकट होता हो कि राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड अनुबंध के आगे जारी रहने पर किस दर से भविष्य में सीमेन्ट कम्पनियों को दी गई फ्लाई ऐश के पेटे वसूल पाने का अधिकारी रहेगा। विद्वान एकल पंच का पंचाट विनिर्दिष्ट रूप से इस तथ्य पर मौन है कि वर्ष 2017 से वर्ष 2022 तक सीमेन्ट कम्पनियों व राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड के मध्य फ्लाई ऐश का अनुबंध जारी रहता है तो सीमेन्ट कम्पनियां किस बढी हुई दर से राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड को संदाय करेगी।

53– विद्वान एकल पंच का पंचाट इस तथ्य पर भी कि यदि निगम एवं सीमेन्ट कम्पनियों का फ्लाई ऐश संबंधित भावी संव्यवहार जो वर्ष 2022 से आगे जारी रह सकता है उस स्थिति में सीमेन्ट कम्पनियॉ किस दर से एवं किस प्रक्रिया अथवा किस फार्मूला से बिकी योग्य फ्लाई ऐश का भाव प्रति मेट्रिक टन की दर से निर्धारित होगा इस बाबत् मौन है। धारा 7 माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम के रूह से

यह प्रकट होता है कि करार द्वारा पक्षकारों के भावी विवादो को भी निस्तारण हेतु माध्यस्थम अधिकरण को संदर्भित किया जा सकता है। निगम एवं सीमेन्ट कम्पनियों के मध्य हुए करार में माध्यस्थम खण्ड विद्यमान है। जब विवाद विद्वान एकल पंच के समक्ष रखा गया तब वाणिज्यिक नातेदारी से युग्मित सभी परिस्थितियां पूर्वानुमान करने योग्य एवं पक्षकारों के तत्कालीन तथा भावी प्रास्थिति सामान्य प्रज्ञानुसार विचारणीय थी। विद्वान एकल पंच के द्वारा अपने आलौच्य पंचाट के विवाद्यक संख्या 6, 9 व 10 विनिश्चत किया जाना चाहिये था और उस पर अपना निष्कर्ष कायम किया जाना चाहिये था। विद्वान एकल पंच के पास ऐसा अवसर तब भी विद्यमान था जब मैसर्स अल्ट्राटेक सीमेन्ट लिमिटेड के द्वारा उनके समक्ष दिनांक 17.03.2015 को माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम की धारा 33 (1)(4) के तहत एक अतिरिक्त पंचाट पारित किये जाने की प्रार्थना की गई थी। इस अवसर पर भी इस आवेदन को दिनांक 17.05.2015 को निस्तारित करते समय विद्वान एकल पंच द्वारा आलौच्य पंचाट के अनिस्तारित के विवाद्यक संख्या 6, 9 व 10 को विनिश्चित नहीं किया गया था एवं ना ही यह तय किया गया कि भविष्य में वर्ष 2017 व वर्ष 2022 के मध्य सीमेन्ट कम्पनियॉ किस बदली हुई दर से फ्लाई ऐश हेतु निगम को भुगतान करेगी।

54– न्यायालय के विनम्र मत में विद्वान एकल पंच को प्रवृत विधि की परीधि में अपने आलौच्य पंचाट दिनांक 18.02.2015 में सभी विवाद्यको को विनिश्चत किया जाना चाहिये था। इसके अभाव में पंचाट में अपूर्णता विद्यमान रहती है। विद्वान एकल पंच के द्वारा अनिस्तारित विवादो के सिरे उन्मुक्त छोड दिये गये है। आसन्न भविष्य में माध्यस्थम के पक्षकारों के मध्य उत्पन्न होने वाले विवादों यथा वर्ष 2017 से

वर्ष 2022 तक और इससे आगे फ्लाई ऐश की बिक्री दर के मूल्य निर्धारण का प्रश्न समाधानहीन छोड दिया गया। विवादों, विवाद्यकों के अनिस्तारण एवं निष्कर्ष तथा कारणों के अभाव की परिस्थितयों में आलौच्य पंचाट में एक वैधानिक अधूरेपन का निर्वात शेष रह गया है। न्यायालय हाजा भी आलौच्य पंचाट की इस कमतरी पर अत्यंत असहाय है क्योंकि धारा 33(1)(4) माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम, 1996 का अवलम्बन, काल व परिस्थिति के परिप्रेक्ष्य में विधि द्वारा अब असुलभ है।

55– पक्षकारान के आचरण से यह तथ्य निर्विवादित है कि आज भी सीमेन्ट कम्पनियां राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम से अपने स्थापित किये हुये संयत्रों के मार्फत फ्लाई ऐश को प्राप्त कर अपने वाणिज्यिक हितो की पूर्ति कर रही है। विद्वान एकल पंच के द्वारा अपने आलौच्य अवार्ड में इस बात का कोई उल्लेख नहीं किया है कि फ्लाई ऐश हेतु 245/– रूपये प्रति मेट्रिक टन की संदेय राशि किस विनिर्दिष्ट तिथि तक लागू रहेगी। फ्लाई ऐश विक्रय योग्य आसत्ति की कोटि में आती है। इस आसत्ति को प्रचलित बाजार भाव से कम में विक्रय सार्वजनिक उपक्रमों के वाणिज्यिक शोषण की परिधि में आता है जो कल्याणकारी राज्य की संकल्पना का विरोधी है एवम् यह लोकहित के भी विरूद्ध है। सार्वजनिक उपक्रमों की आसत्तियों को एक युक्तियुक्त एवं प्रचलित दर से कम में विक्रय करने से दूसरा पक्ष अनुचित रूप से धनी होता है एवम् इससे राष्ट्र का विकास बाधित होता है। इसको भारत की आधारभूत नीति के अनुकूल नहीं कहा जा सकता एवम् यह नैतिकता के भी प्रतिकूल है। यह न्याय के मानकों के भी बरअक्स है। आलौच्य अवार्ड में एक तरफ विद्वान एकल पंच महोदय इस बात की पुष्टि करते है कि

प्रारभिंक रूप से सीमेन्ट कम्पनियां पांच वर्ष तक की निशुल्क फ्लाई ऐश प्राप्त करने की अधिकारिणी थी। पांच वर्ष के पर्यावसान के बाद मूल अनुबंध के निबंधनों के अनुसार अनुबंध को जारी रखा जाना था। सीमेन्ट कम्पनियों से राजस्थान राज्य विद्य ुत उत्पादन निगम लिमिटेड द्वारा किये गये अनुबंध को पुर्नविचारित करने का अधिकार प्रदत्त था। इस अधिकार के उपचार की अथवा निगम के इस अधिकार के प्रर्वतन की कोई ठोस व्यवस्था आलौच्य पंचाट में विहीत नहीं की गई। राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड एक लोक उपकरण एवम् इसकी आसत्तियां निजी आसत्तियों से भिन्न प्रकृति की है। जब विद्वान एकल पंच के द्वारा यह परिनिर्धारित कर दिया गया कि सीमेन्ट कम्पनियों के साथ निगम का अनुबंध प्रारंभिक रूप से पांच वर्ष का था तो वह 2012 में पर्यावसित हो चुका था। ऐसी स्थिति में राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड का अपनी कोटा थर्मल पावर संयंत्र में बनी फ्लाई ऐश के विक्रय हेतु प्रतिस्पर्धात्मक नीलामी प्रक्रिया द्वारा टेन्डर जारी करने का अधिकार विधि अनुसार बल पाता है। विद्वान एकल पंच के द्व ारा राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड द्वारा टेन्डर जारी करने गलत व अविधिपूर्ण माना गया है।

56– विद्वान एकल पंच द्वारा यह मत व्यक्त किया गया है कि राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड द्वारा टेन्डर जारी करने से पूर्व सीमेन्ट कम्पनियों के साथ नेगोशियेशन किया जाना चाहिये था। राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड को अनुबंध के द्वारा इस बात की स्वायता है कि वह सीमेन्ट कम्पनियों के साथ हुये अनुबंध पर पुर्नविचार करे। इस स्वायता के विरूद्ध राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड पर नेगोशियेशन की प्रक्रिया का बोझ लादना न्यायिक प्रज्ञा

के विवेक को स्पर्श नहीं करता है। विद्वान एकल पंच के द्वारा नेगोशियेशन को राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड पर अधिरोपित किये जाने का तथ्य निगम एवं सीमेन्ट कम्पनियों के बीच हुए अनुबंध के दायरे से बाहर का प्रतीत होता है। यह एक सुस्थापित विधि है कि विद्वान एकल पंच की क्षेत्राधिकार स्थली पक्षकारान के मध्य हुआ अनुबंध है एवम् विद्वान एकल पंच अनुबंध के दायरों से बहिर्गमन नहीं कर सकते है। न्यायालय का यह सुदृढ मत है कि निगम अपनी स्वैच्छया से सीमेन्ट कम्पनियो से हुए करार का विहितानुसार पुनर्विचार करने हेतु विधि द्वारा सक्षम है। यदि निगम विहितानुसार पुनर्विचार कर सीमेन्ट कम्पनियों से अनुबंध जारी नहीं रखना चाहता है तो वह विधिपूर्वक अपने इस विकल्प को चुन सकता है तथा स्व विवेकानुसार व स्वैच्छया फ्लाई ऐश के प्रतिस्पर्धात्मक नीलामी विक्रय हेतु टेण्डर प्रक्रिया जारी कर सकता है और वर्ष 2022 में बाजार मूल्य पर अपनी फ्लाई ऐश को बेच सकता है।

57– आलोच्य पंचाट दिनांक 18.02.2015 में जब विद्वान एकल पंच द्वारा विवाद्यक संख्या 6, 9 व 10 पर निष्कर्ष नहीं दिया गया तो यह स्वयंमेव दृढ रूप से इंगित और स्थापित करता है कि इन विवाद्यकों से सम्बन्धित युक्तियुक्त एवं पर्याप्त कारणों का आलोच्य पंचाट में अभाव है। विद्वान एकल माध्यस्थम अधिकरण ने स्वयं अपने आलौच्य अवार्ड में विवाद्यक विरचित किये है एवं उन्हें अकारण ही बिना निष्कर्ष दिये अविचारित छोड देना उचित नहीं है एवं यह न्याय एवं विधि के शासन की ऋजु प्रक्रिया के अन्तर्गत नहीं माना जा सकता है। भारत की विधि की आधारभूत नीति यह कदाचित नहीं हो सकती है कि माध्यस्थम की शरण में आये पक्षकारों के वास्तविक एवं तात्विक विवादों को माध्यस्थम अधिकरण द्वारा अनिष्कर्षित एवं

अनुतरित छोड दिया जाये। अनिस्तारित वास्तविक विवादों के दंश झेलता अधूरा पंचाट पूर्ण न्याय का प्रतिबिंब नहीं हो सकता है। राज्य का हित इसमें है कि पक्षकारों के मध्य विवादों का अन्त हो। निगम व सीमेन्ट कम्पनियों के आलौच्य अवार्ड के प्रति किये गये आक्षेपों से प्रकट है कि प्रेक्षित आलौच्य अवार्ड की रूह संबंधित पक्षकारों के परस्पर आसन्न जायज विवादों के निस्तारण में नाकाम रही है। वाणिज्यिक लोक नीति के संदर्भ में न्याय की मांग एवं भारतीय विधि की आधारभूत नीति के तेज से हस्तगत प्रकरण में आलौच्य पंचाट व पश्चातवर्ती आदेश दोनों के अस्तित्व की संधारणीयता खण्डित होती है। निष्कर्ष व कारणों का यह अभाव आलोच्य पंचाट दिनांक 18.02.2015 में एक वैधानिक अधूरेपन को सृजित करता है। यह वैधानिक अधूरापन आलौच्य पंचाट को विधि की दृष्टि में भंगुर बनाता है।

58– न्यायालय को इस तात्विक व विधिक सिद्धान्त पर विचार करना है कि न्यायालय आलौच्य पंचाट में उपान्तरण करने की शक्ति विधिनुसार रखता है अथवा नहीं। अवार्ड के उपान्तरण के महत्वपूर्ण परिघटना पर विचार किया जाये तो इस पर माननीय उच्चतम न्यायालय ने न्यायिक नजीर एनएचएआई बनाम एम हकीम एसएलपी 13020 / 2020 में मत व्यक्त किया है कि धारा 34 माध्यस्थ अधिनियम के तहत एक पंचाट उपान्तरित नहीं किया जा सकता है :–

> *"Thus there can be no doubt that given the law laid down this Court, Section 34 of the Arbitration Act, 1996 cannot be held to include within it a power to modify an award"*

59– इस न्यायिक नजीर में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रकट किये मत से यह स्पष्ट रूप से निर्धारित होता है कि माध्यस्थम अधिनियम 1940 उपान्तरण को

अनुमित करता था। उस अधिनियम की धारा 15 विनिर्दिष्ट रूप से उपान्तरण को प्रावधानित करती थी परन्तु माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम 1996 अन्तर्राष्ट्रीय मानक विधि के अनुसरण में निर्मित किया गया है। इस विधि के अन्तर्गत माध्यस्थम पंचाट को उपान्तरित करने की कोई शक्ति आलौच्य अवार्ड की सुनवाई करने वाले न्यायालय को प्रदत्त नहीं की गई है। माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 5 से भी यह मत बल पाता है कि वाणिज्यिक न्यायालय माध्यस्थम पंचाट में उपान्तरण करने की विधिक शक्ति नहीं है।

60– माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम की धारा 5 जो अधिनियम के भाग प्रथम में निहित है, निम्नलिखित हैः–

> *''**न्यायिक हस्तक्षेप का विस्तार** – तत्समय प्रवृत किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी इस भाग द्वारा शासित मामलों में, कोई न्यायिक प्राधिकारी उस दशा के सिवाय हस्तक्षेप नहीं करेगा, जिसके लिये इस भाग में ऐसा उपबन्ध किया गया हो।''*

61– माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम की धारा 5 में विधायी शक्ति की मंशानुसार न्यायालय के पास माध्यस्थम कार्यवाहियों में अन्तःक्रमण विधि द्वारा अनुमेयता पर ही स्वीकार्य है। धारा 5 के प्रावधानों अनुसार न्यायालय के पास माध्यस्थम कार्यवाहियों में अन्तःवेधन के अत्यल्प साधन है। न्यायालय स्वयं को माध्यस्थम अधिकरण की पादुकाओं में स्थापित नहीं कर सकता। माध्यस्थम अधिकरण का सर्वांगपूर्ण किरदार न्यायालय स्वयं विधि अनुसार अंगीकृत नहीं कर सकता। माध्यस्थम अधिकरण, माध्यस्थम अधिकरण है एवं वाणिज्यिक न्यायालय, वाणिज्यिक न्यायालय है। धारा 34

माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम ही एक मात्र विहित कसौटी है जिस पर न्यायालय आलौच्य पंचाट को कस सकता है और प्रेक्षित कर सकता है कि आलौच्य पंचाट को प्रदत्त चुनौतियॉ अवार्ड के अस्तित्व के लिये घातक है और इसके कारण आलौच्य पंचाट भंगुरता को हासिल है अथवा आलौच्य पंचाट अक्षेपित चुनौतियों के प्रति प्रतिरोधी है और वह अक्षुण्ण बने रहने लायक है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त मत के संदर्भ में न्यायालय का विनम्र मत है कि वाणिज्यिक न्यायालय मे आलौच्य माध्यस्थम पंचाट को उपान्तरण करने की कोई विधिक शक्ति निहित नहीं है।

62– सीमेन्ट कम्पनियों और निगम के वांछित अनुतोष में एक प्रार्थना अवार्ड को आंशिक रूप से अपास्त करना व अवार्ड का उपान्तरण भी शामिल है। वर्तमान में प्रवृत्त विधि के प्रकाश में आलौच्य अवार्ड को या तो सम्पूर्ण अंशों में बरकरार रखा जा सकता है अथवा सम्पूर्ण अंशों में अपास्त किया जा सकता है। विधि के द्वारा इस निमित्त कोई मध्यम मार्ग नियत नहीं है। परिणामस्वरूप न्यायालय को आलौच्य अवार्ड के आंशिक अपास्तिकरण अथवा उपान्तरण की शक्ति विधि द्वारा विहित नहीं है।

63– परिणामतः प्रकरण के समग्र तथ्यों एवं परिस्थितियों को समग्र रूप से विचार करने के पश्चात् विद्वान एकल पंच का आलौच्य पंचाट दिनांकित 18.02.2015 व तत्पश्चात् पारित आदेश दिनांकित 17.05.2015 विधिनुसार संधारणीय व पोषणीय नहीं होने के कारण अपास्त किये जाने योग्य है एवं निगम व सीमेन्ट कम्पनियों की सभी आपत्ति याचिकाऍ उक्त आलौच्य अवार्ड व आलौचित आदेश को अपास्त करने की हद तक स्वीकार किये जाने योग्य है।

(1) आर्बिट्रेशन प्रार्थना पत्र प्रकरण सं.– **195/2018** CIS No.- 374/2019 CNR No. RJJT1A-000841-2019
अल्ट्राटेक सीमेन्ट लिमिटेड बनाम राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड

(2) आर्बिट्रेशन प्रार्थना पत्र प्रकरण सं.– **188/2018** CIS No.- 366/2019 CNR No. RJJT1A-000831-2019
श्री सीमेन्ट लिमिटेड बनाम राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड

(3) आर्बिट्रेशन प्रार्थना पत्र प्रकरण सं.– **14/2018** CIS No.- 223/2019 CNR No. RJJT1A-000364-2019
बिरला कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड

(4) आर्बिट्रेशन प्रार्थना पत्र प्रकरण सं.– **190/2018** CIS No.- 368/2019 CNR No. RJJT1A-000834-2019
मंगलम सीमेन्ट लिमिटेड बनाम राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड

(5) आर्बिट्रेशन प्रार्थना पत्र प्रकरण सं.– **193/2018** CIS No.- 372/2019 CNR No. RJJT1A-000839-2019
एसीसी लिमिटेड बनाम राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड

(6) आर्बिट्रेशन प्रार्थना पत्र प्रकरण सं.– **194/2018** CIS No.- 373/2019 CNR No. RJJT1A-000840-2019
राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड बनाम अल्ट्राटेक सीमेन्ट लिमिटेड

(7) आर्बिट्रेशन प्रार्थना पत्र प्रकरण सं.– **189/2018** CIS No.- 367/2019 CNR No. RJJT1A-000832-2019
राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड बनाम श्री सीमेन्ट लिमिटेड

(8) आर्बिट्रेशन प्रार्थना पत्र प्रकरण सं.– **13/2018** CIS No.- 222/2019 CNR No. RJJT1A-000363-2019
राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड बनाम बिरला कॉर्पोरेशन लिमिटेड

(9) आर्बिट्रेशन प्रार्थना पत्र प्रकरण सं.– **191/2018** CIS No.- 369/2019 CNR No. RJJT1A-000835-2019
राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड बनाम मंगलम सीमेन्ट लिमिटेड

(10) आर्बिट्रेशन प्रार्थना पत्र प्रकरण सं.– **192/2018** CIS No.- 371/2019 CNR No. RJJT1A-000837-2019
राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड बनाम एसीसी लिमिटेड

**आदेश दिनांक – 13.09.2022**



**–::आदेश::–**

1– निगम व सीमेन्ट कम्पनियों के सभी आपत्ति प्रार्थना पत्र अंतर्गत धारा 34 माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम, 1996 आलौच्य अवार्ड दिनांक 18.02.2015 व पश्चातवर्ती आदेश दिनांक 17.05.2015 को अपास्त करने की हद तक स्वीकार की जाती है।

2– आलौच्य अवार्ड दिनांकित 18.02.2015 को अपास्त किया जाता है।

3– माध्यस्थम अधिकरण आदेश दिनांक 17.05.2015 को भी अपास्त किया जाता है।

4– आलौच्य पंचाट को चुनौती देने वाले सभी पक्षकारान को निर्देशित किया जाता है कि इस आदेश के 30 दिवस के भीतर परस्पर सहमति से अथवा प्रवृत्त कानून अनुसार सक्षम माध्यस्थम अधिकरण की नियुक्ति करवा अपने सभी माध्यस्थम योग्य विवादों का निस्तारण करवायें।

5– इस आदेश की एक–एक हस्ताक्षरित प्रति प्रत्येक आपत्ति प्रार्थना पत्र पत्रावली में शामिल रहे।

**(अमित कुमार कड़वासरा)**
न्यायाधीश
वाणिज्यिक न्यायालय, क्रम संख्या–4,
जयपुर महानगर–द्वितीय

64– आदेश आज दिनांक 13.09.2022 को सरेइजलास लिखाया जाकर सुनाया गया।

**(अमित कुमार कड़वासरा)**
न्यायाधीश
वाणिज्यिक न्यायालय, क्रम संख्या–4,
जयपुर महानगर–द्वितीय